इकाई 2 ब्रिटेन में राजनीतिक संक्रमण : 1780-1850

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- ब्रिटिश राज्यतंत्र तथा विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं की प्रकृति को समझ पाएंगे,
- स्वतंत्रता की धारणा तथा सुधारों की बढ़ती मांगों की पृष्ठभूमि के बारे में जान पाएंगे,
- जनता की मांगें पूरी करने की दिशा में राज्य की ओर से उठाए गए कदमों की व्याख्या कर पाएंगे, और
- श्रमिक वर्ग के आंदोलन की गतिशीलता को समझ पाएंगे।

2.1 प्रस्तावना

आधुनिक ब्रिटेन का अध्ययन इतिहास के क्षेत्रों के लिए अनेक कारणों से दिलचस्पी का विषय रहा है। आप जानते होंगे कि 1780 और 1850 के बीच इंग्लैंड, वेल्स तथा स्कॉटलैंड से मिल कर बने, ग्रेट ब्रिटेन में औद्योगिक क्रांति के कारण जबरदस्त परिवर्तन का दौर आया था। इस एतिहासिक परिवर्तन ने कारखानों की व्यवस्था शुरू करके न केवल निर्माण के क्षेत्र में क्रांति ला दी, अपितु शेष विश्व पर भी दीर्घकालीन प्रभाव छोड़े।

इस प्रक्रिया में नेतृत्वकारी स्थिति बनाते हुए, ब्रिटेन सबसे बड़ी साम्राज्यवादी शक्ति के रूप में उभरा। उसने अपने कब्जे वाले बाजारों तथा संसाधनों का शोषण करते हुए बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक औद्योगीकरण की दौड़ में अपनी बढ़त बनाए रखी। इस विषय में हम खंड 3, इकाई 10 में और विस्तार से चर्चा करेंगे।

दिलचस्प तथ्य यह भी है कि लगभग उन्हीं वर्षों में ब्रिटेन में एक 'उदारवादी राज्यतंत्र' ने स्पष्ट आकार लेना

SCOTLAND
DENMARK
IRELAND
R. BOYNE
ENGLAND
HOLLAND
LONDON
THE EMPIRE
PARIS
SWITZERLAND
FRANCE
VENICE
SAVOY
TOULON
BARCELONA
PORTUGAL
SPAIN
MINORCA
BRITAIN IN EARLY 18TH CENTURY
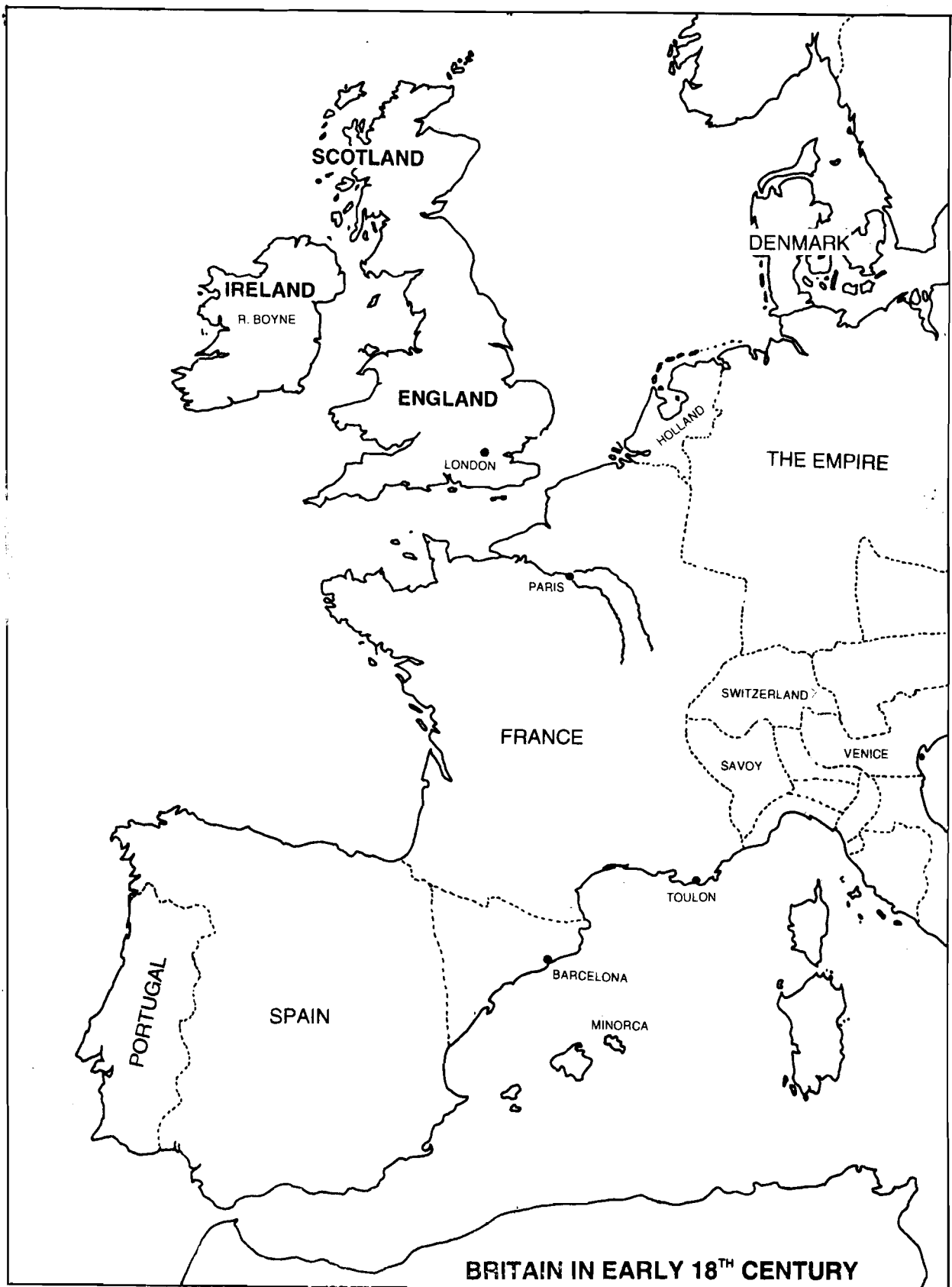
शुरू किया, जिसने आज तक अनेक पूंजीवादी राज्यों के लिए एक आदर्श का काम किया है। इस प्रकार का राज्यतंत्र अपने नागरिकों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति, सभा, धार्मिक विश्वास, असहमति रखने तथा कानून के समक्ष समान व्यवहार के अधिकार की गारंटी देता है। किंतु यह अधिक से अधिक मुनाफा कमाने वाले उद्यमियों की पैदा की गई कृत्रिम मांग के साथ जुड़े 'स्वतंत्र' बाजार के अपव्यय तथा संपत्ति पर आधारित असमानताओं की भी रक्षा करता है। इस इकाई में, हम अठारहवीं शताब्दी के अंत तथा मध्य उन्नीसवीं शताब्दी के बीच ब्रिटेन में इस प्रकार के राज्य के उदय की भी सूक्ष्म पड़ताल करेंगे।

ब्रिटिश इतिहास का यही काल एक नई किस्म की राजनीति के विकास के लिए भी स्मरणीय रहेगा जो संगठित दलों के बीच चुनावी प्रतिस्पर्धा तथा संसदीय चुनावों पर केंद्रित थी। यह राजनीति शासनाधीन प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार देने वाली लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए होने वाले संघर्षों के लिए भी स्मरणीय रहेगा। उभरते हुए मध्यम वर्ग जहां इस नई राजनीति के प्रति विशेष रूप से सरोकार रखते थे, वहीं औद्योगिक श्रमिक वर्ग ने इस लोकतांत्रिक व्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आगे के पृष्ठों में, हम यह समझने की कोशिश करेंगे कि इन राजनीतिक परंपराओं ने ब्रिटेन में किस विशिष्ट ढंग से प्रतिस्पर्धा की तथा आधुनिक राज्यतंत्र के लिए उनके व्यापक प्रभाव क्या रहे।

2.2 ब्रिटिश राज्यतंत्र की प्रकृति

हम 'राजनीति' तथा 'राज्य' से क्या समझते हैं और आधुनिक काल में उनमें किस प्रकार से सामान्य परिवर्तन हुए हैं, इसकी समीक्षा कर लेना हमारे लिए उपयोगी रहेगा। राजनीति का संबंध सत्ता के लिए होने वाले संघर्ष से होता है। जिनके पास सत्ता होती है वे इसे बनाए रखने की कोशिश करते हैं, जबकि जो लोग सत्ता से बाहर होते हैं वे इसका प्रतिरोध करते अथवा इसे हथियाने की कोशिश करते हैं। एक तरह से, यह संघर्ष सभी प्रकार के सामाजिक संबंधों तथा संस्थाओं में व्याप्त रहता है, किंतु, राज्य के स्तर पर इसकी गहनता विशेष रूप में उल्लेखनीय होती है, चाहे वह सत्ताधारी वर्गों के बीच गुटीय टकरावों के रूप में हो या समय समय पर खुल कर सामने आने वाले गरीब तथा अमीर या शासक तथा शासितों के बीच होने वाले व्यापक संघर्षों के रूप में हो।

दूसरी बात यह कि वैचारिक संघर्ष भी राज्य पर केंद्रित राजनीति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सत्ता में बैठे लोग तो धार्मिक अथवा धर्म निरपेक्ष आदर्शों के संदर्भ में मौजूदा व्यवस्था को उचित ठहराने की कोशिश करते हैं, जबकि सत्ता से बाहर के लोग उन बदलावों को लागू करने की फिराक में रहते हैं जो क्रांतिकारी रूप में नए अथवा प्रतिक्रियावादी उद्देश्यों वाले होते हैं। सामान्य अर्थों में, इस प्रकार के राजनीतिक आवेगों को मध्यमार्गी, वामपंथी तथा दक्षिणपंथी कहा जा सकता हैं। किंतु उनका विचार तत्व संदर्भ के अनुसार अलग अलग हो सकता है। और उन्हें मात्र सापेक्ष दृष्टिकोणों के रूप में देखना उपयोगी हो सकता है।

वैसे, आधुनिक काल में 'वामपंथ' की धारणा को श्रमिक वर्ग के या उनके समानतवादी आंदोलनों से जोड़कर देखा गया है, जबकि मध्यमार्गी राजनीति का संबंध अधिकतर बुर्जुआ वर्ग से माना गया है जो व्यक्तिगत अधिकारों की तो वकालत करता है किंतु सामाजिक एकता की नहीं। 'दक्षिणपंथी' राजनीति ने इधर कुछ समय से और भी अनेक रूप ले लिए हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के नवजागरणवादी आंदोलनों से लेकर धर्मनिरपेक्ष तानाशाही तथा फासीवादी राज्य तक आ जाते हैं।

नए नए रंगों की राजनीतिक विचारधाराएं पैदा करने के अतिरिक्त, आधुनिक काल ने उन तरीकों में महत्वपूर्ण परिवर्तन भी देखें हैं जिनके सहारे गुटों तथा वर्गों ने सत्ता हथियाई अथवा उसका प्रतिरोध किया है। इस प्रकार, उभरते मध्यम वर्ग ने उस स्थिति का समर्थन किया है जिसमें 'कानून और व्यवस्था' बनाए रखने का काम एक प्रतिनिधि राज्य करें जिसमें अधिकाधिक उत्पादकता तथा संसाधन जुटाने के कार्य आसान हों और संपत्ति तथा संसाधनों के वितरण में विद्यमान असमानता की बुनियादी स्थिति को छोड़ना भी न पड़े। संगठित राजनीतिक दलों तथा प्रचार के माध्यम से जनता की सहमति जुटाना और मतदाता का समर्थन तथा संसदीय बहुमत हासिल करना इसके मुख्य सरोकार रहे हैं। दूसरी ओर, वामपंथी आंदोलन ने एक अत्यंत असमतावादी सामाजिक व्यवस्था के भीतर संसदीय राजनीति की वैधता पर ही सवालिया निशान लगाया है और जब भी आवश्यक हुआ है उसने वर्ग भेद को संरक्षण देने वाले अत्याचारी राज्यों के विरूद्ध सर्वहारा की हिंसक बगावत खड़ी करने में

हिचकिचाहट भी नहीं दिखाई है। वैसे तो ये राजनीतिक आवेग उन अधिकांश समाजों में समान रूप से विद्यमान रहे हैं जो आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से होकर गुजरे हैं, फिर भी उनका सही सही स्वरूप तथा चरित्र अलग अलग देशों में स्पष्ट रूप से अलग अलग रहा है।

इस संदर्भ में, आधुनिक ब्रिटेन का इतिहास स्थिर राज्यतंत्र की एक असाधारण मिसाल देश करता है, जिसमें उदारवादी लोकतांत्रिक परिवर्तन भी हुआ और उसके शासक वर्ग को उखाड़ फेंकने के लिए हिंसा का सहारा भी नहीं लिया गया। यह स्थिति यूरोप महाद्वीप के अधिकांश देशों से सर्वथा विपरीत थी जहां सामंती शासनों के विरूद्ध और उनके बाद आने वाले बुर्जुआ राज्यों के विरूद्ध भी बार बार विद्रोह हुए। दूसरी ओर, ब्रिटिश उपद्वीप में (आयरलैंड को छोड़ते हुए) इस 'क्रांति युग' में होने वाला परिवर्तन हिंसक राजनीतिक विद्रोह की अपेक्षा औद्योगीकरण के माध्यम से अधिक हुआ।

इसका यह अर्थ नहीं है कि ब्रिटेन में संसदीय राजनीति के श्रमिकों की सभा तथा श्रमिक सहकारिता प्रधान अर्थव्यवस्था जैसे विकल्पों को नहीं आजमाया गया। किंतु 'वामपंथी' विकल्पों के रूप में या तो उनको पर्याप्त समर्थन नहीं मिल पाया या फिर उनके लक्ष्य अपेक्षाकृत नरमपंथी रहे। इसके परिणामस्वरूप, मध्य उन्नीसवीं शताब्दी तक आते आते ब्रिटेन के उभरते मध्यम वर्ग तथा सत्ताधारी कुलीन वर्ग ने समझौते के दृष्टिकोण को अपना लिया और वे इस प्रयास में भी सफल हो गए कि बढ़ते श्रमिक आंदोलनों को संसदीय राजनीति तक ही सीमित कर दिया जाए जो निजी संपत्ति को संरक्षण देने हेतु प्रतिबद्ध थी। यह सब कैसे हुआ? और आधुनिक राजनीति की ओर ब्रिटेन के विचित्र संक्रमण के पीछे किन किन कारकों का हाथ रहा, यह अपने आप में क्रमबद्ध अध्ययन का विषय है।

किंतु इस सबका अध्ययन करने से पहले यहां यह जानना प्रासंगिक होगा कि इस काल के प्रारंभ में ब्रिटेन को किस प्रकार की राजनीतिक संस्थाएं विरासत में मिली।

2.3 राजनीतिक संस्थाओं की प्रकृति

आधुनिक काल के प्रारंभिक वर्षों (लगभग 1500-1800) के दौरान यूरोप के अन्य राज्य अपने आपमें संप्रभुता संपन्न राजनीतिक इकाइयों के रूप में उभरे। ये राज्य अपने शासित भूभागों में रहने वाली समस्त प्रजाओं की राजभक्ति पर दावा ठोंक रहे थे, और फ्रांस के लुई चौदहवें तथा प्रशा के फ्रेडरिक महान जैसे निरंकुशतावादी सम्राटों के अधीन अपने प्रशासनिक तथा आर्थिक कार्यों का तेजी से विस्तार भी कर रहे थे।

किंतु, ब्रिटेन तथा नीदरलैंड्स जैसे देशों में एक संप्रभुतासंपन्न राष्ट्र के उदय के साथ साथ संवैधानिक शासन की व्यवस्था ने भी आकार लिया। इस शासन (सरकार) का आधार सम्राट की मनमानी इच्छा न होकर कानून का शासन था जो संसदीय संविधानों तथा कानूनी परिपाटियों के अनुसार था। ब्रिटेन में विशेष रूप से यह कार्य सत्तरहवीं शताब्दी के दौरान हुई क्रांतियों के बाद हुआ था, ये क्रांतियां स्टुअर्ट वंश के राजाओं की निरंकुशतावादी महत्वाकांक्षाओं के विरूद्ध थीं। जिनमें इन राजाओं को हटा कर एक नए वंश तथा एक नए संविधान को प्रतिष्ठित किया गया और इस नए संविधान में सम्राट, संसद तथा अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्र एक न्यायपालिका के बीच अधिकारों के विभाजन को सुनिश्चित किया गया। संसद वास्तव में ब्रिटेन की सरकार का विशिष्ट अंग थी। इसमें दो सदन होते थे। ऊपरी सदन 'हाउस ऑव लॉर्ड्स' कहलाता था जिसमें उच्च पुरोहित वर्ग तथा कुलीन वंश का प्रतिनिधित्व होता था। निचला सदन 'हाउस ऑव कॉमन्स' कहलाता था और इसका चुनाव सीमित मताधिकार के आधार पर होता था। सत्तरहवीं शताब्दी की क्रांतियों के बाद, निचले सदन ने सम्राट के राजनीतिक अधिकारों पर कुछ महत्वपूर्ण प्रतिबंध लगाने तथा शासन प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका बनाने में सफलता प्राप्त कर ली थी। उदाहरण के लिए, नए कर लगाने तथा सेना समेत सभी राजकीय विभागों पर खर्च करने के सम्राट के अधिकार सहित उसके वित्त पर हाउस ऑव कॉमन्स का नियंत्रण था और यह नियंत्रण अनिवार्य वार्षिक बजट के माध्यम से होता था। इसी प्रकार, सभी नए कानूनों को संसद से पारित करवा कर ही सम्राट की मंजूरी के लिए भेजना होता था। इसके अतिरिक्त, संसद के विधायी तथा बजट संबंधी अधिकारों ने सम्राट की अधिशासी शक्ति पर महत्वपूर्ण प्रतिबंध लगा रखा था और सम्राट बाध्य होता था कि वह अपने

मंत्रियों की नियुक्ति अधिकतर उन व्यक्तियों में से करे जिनके पीछे हाउस ऑव कॉमन्स के सदस्यों की कुछ संख्या हो। इस महत्वपूर्ण परिपाटी ने भविष्य में होने वाले आधुनिक 'कैबिनेट (मंत्रिमंडल) व्यवस्था' के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। इस केबिनेट व्यवस्था में मंत्री परिषद् को सामूहिक रूप से संसद के प्रति जवाबदेह माना जाता है और वह तब तक सत्ता में रह सकती है जब तक उसके पास हाउस ऑव कॉमन्स में बहुमत हो।

ब्रिटेन के मिश्रित संविधान की तरह के अठारहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों तक विश्व में बहुत कम संविधान थे। फिर भी, अधिकार विभाजन की इसकी प्रसिद्ध परंपरा तथा इसकी नियंत्रण एवं संतुलन की विशेषताओं की भी अपनी गंभीर सीमाएं और समस्याएं थीं। हाउस ऑव कॉमन्स के अधिकारों पर सम्राट तथा हाउस ऑव लॉर्ड्स का स्पष्ट नियंत्रण था। इसके अतिरिक्त, हाउस ऑव कॉमन्स के अंदर होने वाली कार्यवाहियों पर निश्चित कार्यक्रमों तथा विचारधाराओं वाले सुसंगठित राजनीतिक दलों का नहीं बल्कि गुटों तथा प्रभाव का दबदबा रहता था। इस प्रकार, 1688 की गौरवशाली क्रांति के बाद से ब्रिटिश संसद में 'विग' तथा 'टोरी' नाम के जो दो प्रमुख राजनीतिक दल थे वे धार्मिक तथा राजनीतिक असहमति के सवालों पर व्यापक तौर पर उन्हीं कुलीन वर्गीय हितों का प्रतिनिधित्व करते थे। टोरी दल के लोग राजनीतिक दृष्टि से अनुदारवादी थे और वे सत्ताधारी एंग्लिकन कुलीनों के प्रति समर्पित थे, जबकि विग के लोग इंगलैंड तथा स्कॉटलैंड में भी संगठित धार्मिक असहमति के समर्थक थे और अधिक राजनीतिक स्वतंत्रता तथा समानता की मध्यम वर्गीय मांग के प्रति अधिक उदार थे। वैसे, कुल मिलाकर संसद में दलों का अनुशासन तथा संगठन अभी भी कमजोर था। इस स्थिति ने संसद में संरक्षण के माध्यम से सम्राट के अनुचित प्रभाव का मार्ग प्रशस्त किया।

तीसरी बात यह कि हाउस ऑव कॉमन्स के सदस्यों का मतदाताओं में आधार अत्यंत ही सीमित था और हाउस ऑव लॉर्ड्स की तरह निचले सदन में भी जमींदार वर्ग के हितों का ही वर्चस्व था। इस प्रकार, अठारहवीं शताब्दी के अंत में इंगलैंड की मात्र 2% जनता के पास ही वोट देने का अधिकार था। देहाती इलाकों में तो केवल उन्हीं लोगों को मतदान का अधिकार था जिनके पास कम से कम 40 शिलिंग की फ्रीहोल्ड संपत्ति थी, जबकि शहरी क्षेत्रों में चुनाव क्षेत्रों के बीच भारी असमानताएं थीं। वेस्टमिनिस्टर जैसे कुछ बड़े केंद्रों में कई हजार मतदाता थे जबकि ओल्ड सैरम जैसे परित्यक्त कसबों में मतदाताओं की संख्या केवल सात थी। चुनावों के समय दबदबे और पैसे का जो गलत इस्तेमाल होता था उसने सीमित मतदान की इस स्थिति को ओर भी दूषित कर दिया था।

वैसे तो उस समय के अनेक लोगों ने राजनीतिक प्रक्रिया में व्याप्त इस 'भ्रष्टाचार' पर गौर करते हुए उसकी आलोचना भी की थी, फिर भी यह तथ्य भी अपने आपमें कम दिलचस्प नहीं है कि संसद के संकीर्ण सामाजिक आधार का अठारहवीं शताब्दी के अधिकांश सिद्धांतविदों ने समर्थन ही किया था। उस समय की संसदीय प्रणाली के जो प्रमुख सांसद थे, वास्तव में उनका भी यह मानना था कि देश में केवल जमींदारों का ही दावा था इसलिए संसद में उनके अधिकार का प्रतिनिधित्व आवश्यक था। यहां तक कि एडमंड बर्क जैसे सुधारक भी गरीबों के प्रति तिरस्कार का भाव रखते थे और वे किसी भी जन-आंदोलन को सुधार की दिशा में सहायक न मान कर उससे भय ही खाते थे।

उस समय के स्थानीय शासन की प्रकृति की चर्चा के बगैर ब्रिटिश राज्य का कोई भी विवरण अधूरा ही रह जाएगा। यह वह समय था जब दैनिक अखबार केंद्र सरकार के निर्णयों की खबर घर-घर तक नहीं पहुंचाते थे, इसलिए उन दिनों अधिकांश नागरिक वास्तविक शासन के नाम पर गिरजाघर अथवा ग्राम परिषद, नगरपालिका तथा निचली अदालतों के शासन से ही परिचित थे। औसत ब्रिटिश नागरिकों के लिए कस्बों में मेयर तथा उपनगरपाल (ऑल्डर्मन) और जिलों में कानून व्यवस्था के जिम्मेदार लॉर्ड्स लेटिनेंट तथा मजिस्ट्रेट (या जस्टिस ऑव पीस) ही राज्य का प्रतीक होते थे। वास्तव में जस्टिस ऑव पीस स्थानीय स्तर पर अनेक कार्य करता था, जिनमें राजस्व अधिकारी तथा गरीबों के लिए कल्याण अथवा राहत के आयोजक का काम शामिल था। यह अपने आपमें उल्लेखनीय है कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों तक ब्रिटेन में कोई नियमित पुलिस इन अवैतनिक स्थानीय अधिकारियों की सहायता के लिए नहीं थी। बस रक्षक सेना की एक छोटी सी टुकड़ी होती थी जिसे अशांति के समय मदद के लिए बुलाया जा सकता था। इस समय महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला एक और प्रमुख अधिकारी होता था - सुधार आयुक्त। इनकी नियुक्ति आमतौर पर संसद के अधिनियमों के माध्यम से होती थी और उनका काम होता था जिलों में सड़कों, पुलों, नहरों आदि का निर्माण करवाना।

यह बात तो स्पष्ट हो ही चुकी है कि ब्रिटेन में केंद्र तथा स्थानीय दोनों स्तरों पर कर निर्धारण करने तथा राज्य के व्यय और गरीबों की राहत पर व्यय होने वाले धन को नियंत्रित करने का अनूठा काम वहां की प्रतिनिधि संस्थाएं करती थी। अब यह बात भी याद रखने योग्य है कि सभी स्तरों पर जमींदार कुलीनों का दबदबा बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक अटूट था। ब्रिटिश कुलीन तंत्र की वास्तव में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएं थीं। जिनकी यहां संक्षेप में चर्चा की जा सकती है।

शीर्ष पर, कोई 350 परिवारों का एक शक्तिशाली गुट था जिनके पास बड़ी बड़ी जागीरें थीं। आमतौर पर इन लोगों के पास 'अमीर' (नोबल) की पदवी थी। हाउस ऑव लॉर्ड्स में सदस्यता का होना तो उनका विशेषाधिकार था ही, राज्य के अन्य महत्वपूर्ण पदों पर भी उनका कब्जा था। अमीरों के इस विशिष्ट गुट के नीचे कोई 4000 परिवार और थे जो 'भद्रजन' (जेन्ट्री) की श्रेणी में आते थे। इन भद्रजनों के पास भी काफी जमीन जायदाद होती थी। इनमें से कुछ के पास तो 'सामंतों' (लॉर्ड्स) के बराबर ही धन संपदा थी, किंतु उनकी पदवी 'सरदार' (नाइट) या 'नवाब' (बैरन) की होती थी और उनकी महत्वाकांक्षा अवैतनिक जस्टिस ऑव पीस बनना या हाउस ऑव कॉमन्स की सदस्यता प्राप्त करना थी।

ब्रिटिश कुलीन तंत्र की एक और विचित्र विशेषता इसका अत्यंत सुसंगठित और छोटा आकार था। जहां अधिकांश यूरोपीय राष्ट्रों में शासक वर्ग में अमीर परिवारों के समस्त वंशजों को शामिल किया जाता था। वहीं ब्रिटेन में पदवी धारकों की संख्या अत्यंत सीमित होती थी। इसका कारण था 'ज्येष्ठाधिकार' की प्रथा अर्थात् पिता की मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति पर सबसे बड़े पुत्र का अधिकार होना और पदवीधारकों के छोटे बच्चों का लगातार सेनाओं, कूटनीतिक दलों, धर्म संस्था (चर्च) तथा वित्त के क्षेत्र में उच्च पदों पर भरती होते रहना। इसके अतिरिक्त, सफल व्यापारी अथवा पेशेवर लोग भी पर्याप्त जागीर खरीदकर पदवियां हासिल करने के स्वपन देख सकते थे। अंत में, यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि ब्रिटिश कुलीन तंत्र के भीतर, विशेषकर अठारहवीं शताब्दी के दौरान झगड़ों तथा अंतर्वर्गीय हिंसा के रूकने के साथ साथ सज्जनता के आदर्श का भी विकास हुआ और रियासतों के सुधार की ओर अधिकाधिक ध्यान दिया गया तथा मारधाड़ की जगह सीखने सिखाने के चलन को महत्व दिया गया।

2.4 स्वतंत्रता की धारणा

यहां हमें ब्रिटिश राज्यतंत्र की एक और विशेषता की ओर ध्यान होगा और वह है अपनी प्रजा के लिए 'स्वतंत्रता' को बढ़ावा देने का उसका दावा। अनेक ब्रिटिश टिप्पणीकारों के अतिरिक्त, कई विदेशी पर्यवेक्षकों (मांतेस्क्यू एवं वाल्तेयर जैसे चिंतकों समेत) ने भी अठारहवीं शताब्दी के दौरान इस बात पर जोर दिया कि ब्रिटिश राज्यतंत्र केवल अपनी शक्तिशाली संसद के कारण ही विशिष्ट नहीं था अपितु उसके सामान्य नागरिकों को प्राप्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार तथा जानमाल की सुरक्षा की गारंटी के कारण भी विशिष्ट था। कुछ आधुनिक चिंतकों ने भी यह टिप्पणी की है कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ होते होते ब्रिटेन श्रमिक वर्ग से अतिरिक्त आय की वसूली के लिए प्रत्यक्ष बल प्रयोग की जगह कानून के शासन का अधिकाधिक इस्तेमाल कर रहा था।

यह बात निश्चित रूप से सच है कि नए कर लगाने के कार्यपालिका के अधिकार पर संसद के नियंत्रण, निजी संपत्ति की पवित्रता, अंगरेजी सामान्य कानून की स्वाधीन परंपरा, बंदी प्रत्यक्षीकरण (Habeus Corpus) जैसे कानूनी प्रावधानों की शक्ति तथा अपेक्षाकृत स्वतंत्र समाचार माध्यमों (प्रेस) के कारण ब्रिटेन के उच्च तथा मध्य वर्गों को एक ऐसे समय में महत्वपूर्ण अधिकारों की गारंटी मिली हुई थी जब इस प्रकार की स्वतंत्रता और कहीं प्राप्त नहीं थी। इसके साथ ही यह बात भी स्मरण रखने योग्य है कि व्यवहार में इन स्वतंत्रताओं का लाभ केवल धनी लोग ही उठा सकते थे जो कानून की लंबी समय तक खिंचने वाली प्रक्रियाओं की मदद ले सकते थे। वास्तव में ब्रिटेन की अदालतों तथा हॉब्स एवं लॉक से लेकर बेंथम एवं बैजट जैसे राजनीतिक चिंतकों तक ने निजी संपत्ति की पवित्रता को बनाए रखने की जोरदार वकालत की जबकि कानून तो गरीबों के प्रति बेहद कठोर ही रहे।

यह सब जानते हैं कि सभी असमतावादी समाजों में प्रथाएं तथा प्रधान मूल्य तो शासक वर्गों के पक्ष में ही पूर्वाग्रह ग्रस्त होते हैं। जमीन और पूंजी के मालिक जहां बिना कोई प्रयास किए अंधाधुंध मुनाफा और लगान की कमाई करते हैं, वहीं धन के असली जनक-मजदूर लोग अक्सर बहुत कम दिहाड़ी पर मेहनत करने को विवश होते हैं। स्त्रियां अक्सर घर के काम काज में जुटी रहती हैं, जिसके लिए उन्हें कोई पैसा नहीं मिलता। निचले वर्ग के खिलाफ राजनीतिक तथा कानूनी स्तर पर जो भेदभाव होता है उससे इस वर्ग की आर्थिक अभाव वाली स्थिति और भी खराब हो जाती है।

इस मामले में ब्रिटिश समाज भी कोई भिन्न नहीं था। यह सच है कि ब्रिटेन में कानून बनाने वाले तथा उन्हें लागू करने वाले भी लगभग सारे के सारे जमींदार कुलीन वर्ग के व्यक्ति होते थे। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि सरकार भी इस वर्ग के पक्ष में पूर्वाग्रह ग्रस्त थी। स्त्रियों, मजदूरों तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों को राजनीतिक तथा मतदान के अधिकारों से वंचित रखने के अतिरिक्त, अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटिश राज्य ने मजदूरों के स्वतंत्र आवागमन पर अनेक प्रतिबंध लगा कर रखे और उसकी यह भी चेष्टा रही कि कीमतों तथा मजदूरी

की दर को जमींदार कुलीन वर्ग के पक्ष में रखा जाए। इनमें से कुछ प्रतिबंध बाद में औद्योगिक पूंजीवाद की राह में बाधक सिद्ध होने लगे और इसीलिए उन्हें उन्नीसवीं शताब्दी में धीरे धीरे हटा लिया गया। आगे हम इसी बारे में पढ़ेंगे।

वैसे, पूरी अठारहवीं शताब्दी के दौरान ब्रिटिश राज्य का सबसे अधिक ध्यान इस बात पर केंद्रित रहा कि खेती से जुड़े भद्रजनों को स्वाधीन किसानों तथा मजदूरों की कीमत पर मजबूत किया जाए। इसका एक उदाहरण बाड़ाबंदी (एनक्लोजर) आंदोलन था जिसे संसदीय विधान का पर्याप्त समर्थन प्राप्त था। इस आंदोलन में धनी लोगों ने व्यावसायिक खेती के लिए बड़ी बड़ी भूसंपत्तियां बना डाली, और इसके लिए उन्होंने गरीब किसानों को बेदखल करके ग्रामीणों की साझा भूमि पर कब्जा कर लिया। दूसरी ओर, वही संसद इस सीमा तक चली गई कि उसने साझा भूमि पर शिकार करने तथा जंगलों से 'चोरी' करने जैसे छोटे छोटे अपराधों के लिए मौत की सजा का प्रावधान कर दिया। गरीब जनता के दिमाग में जमींदार वर्ग का आतंक बैठाने के उद्देश्य से यह भी प्रावधान कर दिया गया कि इस प्रकार के अपराधियों को फांसी पर चढ़ा दिया जाए। अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटेन में मृत्यु दंड के योग्य पाए गए दोषियों में चालीस शिलिंग से ऊपर कीमत का सामान चुराने वाले बच्चे और जंगल में खरगोश का शिकार करने की कोशिश करने वाले भूख से तड़पते मजदूर भी हो सकते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि ब्रिटेन के आम आदमी के लिए 'स्वतंत्रता' के दावों का कोई अर्थ नहीं था।

'जॉन विल्क्स का मामला' इस का एक अच्छा उदाहरण है कि ब्रिटेन के सत्ताधारी वर्गों को 'स्वतंत्रता' किस हद तक और किस स्वरूप में स्वीकार्य थी, तथा अठारहवीं शताब्दी के अंत में मध्यम वर्ग में इसके क्षेत्र के विस्तार की आकांक्षा क्या थी। यहां हम जो सारांश प्रस्तुत कर रहे हैं, उसे पढ़ते हुए आप अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटेन की राजनीतिक संस्कृति तथा मुगल/ मांचू दरबारों की उन संस्कृतियों के बीच कुछ महत्वपूर्ण अंतरों की सूची बनाइए जिनके बारे में आप पहले पढ़ चुके हैं।

विल्क्स एक देहाती डिस्टलर (अर्क निकालने वाला) का बेटा था, जिसने शादी करके एक देहाती भद्र पुरूष की हैसियत बना ली थी। वह 1757 में संसद में पहुंचा और धीरे धीरे जॉर्ज तृतीय के एक कट्टर आलोचक के रूप में सामने आया उसके प्रकाशन **नॉर्थ ब्रिटेन** ने भी राजा के चहेते मंत्रियों पर हमलों के लिए एक प्रमुख मंच का काम किया। 1763 में जब ब्रिटेन ने पेरिस समझौते पर हस्ताक्षर किए तो विल्क्स ने इस समझौते के कुछ अलोकप्रिय प्रावधानों के लिए राजा की ही आलोचना कर डाली।

इस स्थिति पर गृह मंत्री, हैलीफैक्स ने एक आम वारंट जारी किया कि 'नॉर्थ ब्रिटेन के प्रकाशन से संबंधित सभी व्यक्तियों' को गिरफ्तार कर लिया जाए। किंतु विल्क्स विशेषाधिकार का दावा लेकर अदालत की शरण में गया और उसने गिरतारी के आम वारंट की वैधता को भी चुनौती दी। इन दोनों ही मुद्दों पर वह अदालती लड़ाई जीत गया और उसने मंत्री के विरूद्ध हरजाने का दावा ठोक दिया। उसके बाद विल्क्स के शत्रु उसे मान हानि के आरोप में संसद से निकलवाने में सफल हो गए। तब विल्क्स ने फ्रांस में शरण ली। लेकिन उससे पहले वह लंदन में नायक की हैसियत बना चुका था और उसने जनता की दृष्टि में सरकार को उपहास का पात्र बना दिया था।

वर्ष 1768 में विल्क्स फ्रांस से लौट आया और मिडिलसेक्स से संसद के चुनावों में खड़ा हो गया। उसने अत्याधिक रोमांच तथा पूरे लंदन में 'विल्क्स और आजादी' के नारों के बीच यह सीट जीत भी ली। सांसदों को यह बात रास नहीं आई कि एक घोषित अपराधी उनके बीच बैठेगा और उन्होंने दो बार विल्क्स को संसद से निकलवा दिया। लेकिन दोनों ही बार मिडिलसेक्स के मतदाताओं ने उसे वापस संसद में भेज दिया। इस स्थिति पर आकर, उग्र सुधारवादी होर्न टुक ने 'सोसायटी फॉर दि डिफेंस ऑव बिल ऑव राइट्स' की स्थापना की और लॉर्ड चैटैम जैसे नेताओं ने भी यह स्वीकार किया कि एक गंभीर संवैधानिक मुद्दा दांव पर था और अंत में विल्क्स को संसद में वापस लेना पड़ा।

'विल्क्स प्रकरण' का तीसरा प्रसंग 1771 में शुरू हुआ जब संसद की कार्यवाही छापने वाले मिडिलसेक्स के एक अखबार के मालिक को अधिकारियों ने गिरफ्तार करना चाहा। किंतु विल्क्स उस समय मजिस्ट्रेट था। उसने संसद के भेजे हुए एक संदेशवाहक को ही गिरफ्तार कर लिया और उसके सम्मन की तामील करने से इंकार कर दिया। अंत में, हाउस ऑव कॉमन्स को मजबूर होकर अपनी बहसों को छापने के अखबारों के अधिकार को स्वीकार करना पड़ा।

बोध प्रश्न 1

1) क्या आप सोचते हैं कि ब्रिटेन में होने वाला राजनीतिक बदलाव दूसरे यूरोपीय देशों से भिन्न था? पांच वाक्यों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

2) ब्रिटिश संसद के गठन तथा प्रकृति की 100 शब्दों में व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

3) ब्रिटिश राज्यतंत्र में कुलीन तंत्र की क्या भूमिका थी? पांच वाक्यों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

4) 'ब्रिटिश कानून गरीबों की पहुंच से बाहर था।' 50 शब्दों में व्याख्या कीजिए।

....

....

....

....

....

2.5 सुधार की मांग

पूरी अठारहवीं शताब्दी के दौरान, ब्रिटेन में जनसंख्या, कृषि उत्पादन तथा व्यापार और वाणिज्य में जबरदस्त विस्तार हुआ। इस लगातार आर्थिक विकास ने शताब्दी के अंत तक देश में नई सामाजिक तथा राजनीतिक ताकतों को उन्मुक्त कर दिया। इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और वेल्स तेजी से शहरीकरण की प्रक्रिया से गुजर रहे थे और वहां एक नई सामाजिक व्यवस्था का उदय हो रहा था जिसमें पुराने पुरोहित वर्ग, जमींदारों तथा खेतिहार कामगारों के स्थान पर मध्यम तथा श्रमिक वर्ग का दबदबा था। इसके अतिरिक्त, नए सामाजिक गुटों के बीच जो संबंध थे वे गुणों की दृष्टि से पुराने सामाजिक गुटों के संबंधों से भिन्न थे। अपेक्षाकृत अधिक प्रतिस्पर्धा तथा विरोध ने इन वर्गों के बीच संबंधों को जान दी थी। क्योंकि ऊंच-नीच के आधार पर भिन्नताओं को स्वीकार करने अथवा सम्मान देने की स्थिति अब समाप्त हो रही थी।

राजनीतिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण बदलाव जो देखने में आ रहा था वह था जानकार जनमत का विकास, अखबारों की बढ़ती संख्या और ऐसी अनेक समितियों तथा दबाव गुटों का उदय जो चुनाव सुधार, वित्तीय

अनुशासन, दासता उन्मूलन तथा स्वतंत्र व्यापार जैसे जनहित के विभिन्न कार्यों के प्रति समर्पित थे। 1760 से 1820 तक ब्रिटेन पर शासन करने वाले जॉर्ज तृतीय की हेकड़ी, उसके शासनकाल में फॉक्स तथा विल्क्स जैसे नेताओं की अगुवाई में उदारवादी अधिकारों के लिए लड़ाई और 1776 के बाद अमेरिका में ब्रिटिश उपनिवेशों की आजादी से उठे मुद्दों ने असंतोष की इस आग में घी का काम किया। कोई आश्चर्य नहीं कि अठारहवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में संसद की कार्य प्रणाली में सम्राट के अनुचित हस्तक्षेप के विरूद्ध तथा सरकार के हाथों व्यक्तिगत स्वतंत्रता के हनन के विरूद्ध भी बड़े विरोध प्रदर्शन हुए।

ब्रिटेन में उन क्रांतिकारी दशकों से ही उदारवादी सोच की परंपरा चली आ रही थी जब जॉन लॉक जैसे दार्शनिकों ने एक ऐसे राज्य के सिद्धांत का समर्थन किया था जो लोगों के जान माल की रक्षा हेतु प्रतिबद्ध था। प्रेस की स्वतंत्रता तथा 1760 और 1770 के दशकों में मनमानी गिरतारी के विरूद्ध सुरक्षा पर केंद्रित विल्क्स प्रकरण से पैदा हुए नए विवादों ने नागरिक अधिकारों के मुद्दों को ब्रिटिश राजनीति में और आगे ला दिया। 1769 में 'सोसायटी फॉर दि डिफेंस ऑफ बिल ऑव राइट्स' तथा 1780 में 'सोसायटी फॉर कांस्टीट्यूशनल इनफार्मेशन' के गठन से इस प्रकार के संघर्षों को संगठित रूप मिल गया।

वैसे, उस समय के अधिकांश मध्यम वर्गीय नेता स्वतंत्रता के बारे में केवल जमींदार वर्गों के दृष्टिकोण से सोचते थे। मैरी कॉलस्टोनक्राट जैसी कुछ अग्रणी नारी मुक्तिवादियों तथा रॉबर्ट ओवन जैसे प्रारंभिक समाजवादियों ने निजी संपत्ति की पवित्रता तथा पितृसत्ता के अधीन स्त्रियों के दमन जैसे मुद्दों पर सवालिया निशान लगाने की कोशिश की। किंतु, अधिक सामान्य स्थिति तो यही थी कि मजदूरों, धार्मिक अल्पसंख्यकों तथा स्त्रियों के हितों की अनदेखी उस उदारवादी विचारधारा में भी होती रही जिसका उस दौर में ब्रिटेन में बोलबाला था।

इन वर्षों के दौरान उदारवादियों की सर्वाधिक चिंता का विषय ऊंचे कर तथा सरकारी खर्च में होने वाली बरबादी रही। संसद और समाचार पत्र वे महत्वपूर्ण मंच थे जिनके माध्यम से इन बुराइयों के विरूद्ध 'आर्थिक सुधारों' की मांग उठाई गई। 1779 में, भद्रजनों के प्रभावशाली तबकों ने वाइविल के नेतृत्व में इस प्रकार की मांगों को आगे समर्थन दिया। इसके परिणामस्वरूप, एडमंड बर्क जैसे अनुदारवादी नेताओं तथा पिट (कनिष्ठ) जैसे उदारवादियों ने ऐसे अनेक सुधारों की शुरुआत की जिनके परिणामस्वरूप सम्राट के संरक्षकत्व की परंपरा का अंत हुआ तथा ब्रिटेन में आधुनिक बजट पद्धति का शुभारंभ हुआ।

सरकारी खर्च में मितव्ययता के अतिरिक्त, उभरते हुए मध्यम वर्गों की दिलचस्पी व्यापक स्तर पर बाजार सुधारों में भी थी। यह मांग विशेषकर लंदन के बैंक वालों तथा व्यापारियों और बरमिंघम तथा मैनचेस्टर जैसे उभरते औद्योगिक केंद्रों के उद्योगपतियों ने उठाई। ये लोग मुक्त बाजार सिद्धांतों के घोर समर्थक हो गए और उन्होंने व्यापार तथा निर्माण के क्षेत्रों में राज्य समर्थित एकाधिकारों तथा ऊंचे सीमा शुल्क को समाप्त करने के लिए अभियान चलाया। बाजार में राज्य के कम से कम हस्तक्षेप तथा आर्थिक उद्यम की स्वतंत्रता को सिद्धांत रूप में उचित ठहराने वाली ऐडम स्मिथ की पुस्तक 'दि वेल्थ ऑफ नेशन्स' इन लोगों के विचारों का समर्थन करने वाला एक प्रभावकारी ग्रंथ बन गया।

पूंजीवादी निर्माताओं तथा व्यापारियों तथा शिक्षित पेशेवरों को अपने में समेटे उभरते हुए बुर्जुआ वर्ग ने यह मांग उठाई कि बाजार में राज्य का कम से कम हस्तक्षेप हो। इसके साथ ही उन्होंने ये नई मांगें रखीं कि राज्य में कमजोर ही सही किंतु सक्षम तंत्र हो जो तर्कसंगत सिद्धांतों पर काम करें और देश में निजी उद्यमों के सुचारू ढंग से कार्य करने को सुनिश्चित करें। उस समय के एक और प्रभावशाली चिंतक जेरेमी बेंथम के 'उपयोगितावाद' के सिद्धांत ने इस प्रकार की मांगों के औचित्य के लिए एक दार्शनिक धरातल प्रस्तुत किया। इस सिद्धांत की यह मांग थी कि समाज के तमाम कानूनों तथा संस्थाओं की परख उनकी अधिकतम उपयोगिता के आधार पर की जाए, उनकी पारंपरिक पवित्रता अथवा सैद्धांतिक अधिकारिकता के आधार पर नहीं।

इस दौर में जनता की चिंताओं के अन्य विषय थे : जन स्वास्थ्य एवं शिक्षा, अपराध एवं नैतिकता, कैदियों के साथ व्यवहार, इधर-उधर फैली औद्योगिक मलिन बस्तियों में रहने वाले गरीब लोगों की स्थिति तथा असहमति रखने वाले धार्मिक गुटों के अधिकार जैसे मुद्दे। उदारवादियों के अतिरिक्त उपयोगितावादियों तथा यूटोपियाई समाजवादियों, इवेंजेलिकल तथा मैथोडिस्ट जैसे पंथों के धार्मिक आंदोलनों ने भी समकालीन ब्रिटिश राजनीति में इन मुद्दों को उठाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस बीच, चुनावी तथा संसदीय सुधारों की मांग मजदूर तथा कारीगर वर्गों और मध्यम वर्ग के तबकों के बीच जोर पकड़ रही थी। टॉम पेन तथा मेजर कार्टराइट जैसे उग्र सुधारवादियों (रैडिकल्स) के लेखन ने इस सिलसिले में एक शक्तिशाली उत्प्रेरक का काम किया। 1789 में फ्रांसीसी क्रांति की शुरुआत ने भी ब्रिटेन में उग्र सुधारवादी आंदोलन पर सकारात्मक प्रभाव डाला, क्योंकि इस ने उन लोकतांत्रिक सुधारों में लोगों की दिलचस्पी को फिर जगा दिया जो लंदन में 1780 में कैथोलिकों के विरूद्ध गॉर्डन के बदनाम दंगों के बाद हाशिए पर चले गए थे। यह वह समय था जब 'दि सोसायटी फॉर कांस्टीट्यूशनल इनफॉरमेंशन' को फिर से स्थापित किया गया और प्रांतों में अनेक रिपब्लिकन क्लब खोले गए। इनमें 'लंदन कोरिस्पांडिग सोसायटी' एक सर्वाधिक उग्र सुधारवादी संस्था थी। इस संगठन ने लंदन के टॉमस हार्डी के दिशा निर्देशन में संसदीय सुधार तथा श्रमिक अधिकारों के लिए एक राष्ट्र व्यापी विरोध बनाने का प्रयास किया और फ्रांस के 'रिवोल्यूशनरी कन्वेंशन' के साथ संपर्क भी स्थापित किया।

हालांकि ब्रिटेन के उग्र सुधारवादियों की मांगे तथा आकांक्षाएं इतनी उग्र नहीं थी, फिर भी फ्रांस में होने वाली क्रांतिकारी हिंसा ने ब्रिटिश अधिकारियों को अत्यधिक चौकन्ना कर दिया। 1793 और 1815 के बीच, यूरोप के अन्य साम्राज्यों के साथ गठबंधन में ब्रिटेन का क्रांतिकारी फ्रांस के साथ लगातार युद्ध चलता रहा। इस दौरान ब्रिटिश राज्य ने अपनी सत्ता को पक्का करने के लिए न केवल राष्ट्रवादी भावनाओं का इस्तेमाल किया, अपितु उग्र सुधारवादियों तथा उभरते श्रमिक आंदोलन के विरूद्ध भी अपूर्व दमन चक्र चला दिया। इसमें 1794 में गठबंधन विरोधी कानूनों का लागू करना शामिल था। इसके अतिरिक्त राजद्रोह के अनेक मुकदमें चलाए गए और तमाम उग्र सुधारवादी संगठनों का हिंसक दमन भी किया गया।

फिर भी, ब्रिटेन में उग्र सुधारवादी आंदोलन को दमन से भी नहीं दबाया जा सका। कार्टराइट जैसे पुराने धुरंधरों तथा कॉबेट जैसे नए नेताओं के दिशा निर्देशन में अनेक कस्बों में हैम्पडेन क्लबों का गठन किया गया जिनका उद्देश्य संसदीय सुधारों के लिए दबाव बनाना तथा विशेषकर 1803 के बाद मताधिकार का विस्तार करना था।

इस बीच ब्रिटेन में श्रमिक आंदोलन भी गति पकड़ रहा था। औद्योगिकरण के शुरुआती दौर में सर्वहारा वर्ग के लोगों को बहुत मुसीबतों का सामना करना पड़ा। उन्हें बहुत कम वेतन पर कई कई घंटे बेहद प्रतिकूल स्थितियों में काम करना पड़ता था और अधिकारों तथा सामाजिक सुरक्षा के नाम पर उनके पास कुछ भी नहीं था। इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि इन पाशविक स्थितियों के चलते मजदूरों ने कई स्थानों पर विधिवत उन मशीनों को ही तोड़ डाला जो उनके लिए नई व्यवस्था की प्रतीक थीं। इन मशीन भंजकों को उनके मिथकीय नेता नेड लुड के नाम पर लडाइट कहा गया है।

लेकिन ब्रिटेन में श्रमिक आंदोलन वास्तव में एकजुट न होकर अलग अलग शाखाओं के रूप में फैला हुआ था। इसमें आत्म सहायतार्थ ऋण संस्थाओं से लेकर श्रमिक सहकारी समितियां और अधिक उग्र सुधारवादी लोकतंत्रवादी (डेमोक्रैट) तथा समाजवादी तक शामिल थे। लोकतंत्रवादियों की आस्था तो सार्वजनिक मताधिकार (यूनिवर्सल फ्रैंचाइज) तथा संसदीय सुधारों में थी और वे श्रमिल संगठन (यूनियन) बनाने तथा बेहतर स्थितियों के लिए हड़ताल करने के मजदूरों के अधिकार के पक्षधर थे। रॉबर्ट ओवन (1771-1858) जैसे समाजवादियों ने यह भी तर्क रखा कि सारी संपदा की उपज श्रम से ही होती है इसलिए श्रमिक वर्गों को अपने काम के पूरे पूरे फल की मांग करनी चाहिए। लेकिन, पूंजीवादी व्यवस्था में संपदा का सबसे बड़ा हिस्सा तो पूंजी के मुट्ठी भर मालिक ही हड़प जाते हैं।

इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था को किस प्रकार बदला जाए? हर कहीं समाजवादियों के सामने यही प्रमुख मुद्दा था। ओवन ने स्वयं राज्य से सीधा टकराव मोल न लेकर श्रमिकों की सहकारी समितियों तथा आत्म सहायता पर ही जोर दिया। इन विचारों को साकार करने के लिए उसने पहले ग्लासगों में न्यू लैनार्क स्पिनिंग मिल तथा बाद में इंडियाना (अमेरिका) में न्यू हार्मनी सोसायटी की स्थापना उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में की। आगे हम ब्रिटेन के श्रम आंदोलन के बारे में और भी जानकारी हासिल करेंगे।

2.6 राज्य द्वारा उठाए गए कदम

इस बीच ब्रिटिश राज्य ने इन विभिन्न मांगों का अलग अलग ढंग से ज़वाब दिया। उभरते मध्यम वर्गों की आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए कुछ आर्थिक तथा प्रशासनिक सुधारों को स्वीकार कर लिया गया। वास्तव में ब्रिटिश अल्पतंत्र (ऑलिगाकी) के इस प्रकार के 'सुधारवादी अनुदारवाद' ने उसे उस समय के अधिकांश यूरोपीय शासनों से स्पष्ट रूप से अलग छवि प्रदान की और इससे वहां के कुलीन तंत्र तथा बुर्जुआ वर्ग के बीच प्रारंभिक गठबंधन बनाने में मदद मिली। किंतु मजदूरों की मांगों को संदेह की दृष्टि से ही देखा गया और उन्हें औद्योगीकरण के प्रारंभिक वर्षों में ही साफ तौर पर दबा दिया गया।

इस प्रकार, 1815 में वाटरलू में नेपोलियन की हार का जश्न पूरे ब्रिटेन में मनाया गया। किंतु सुधारों की प्रतीक्षा कर रहे मैनचेस्टर तथा बरमिंघम के लिए युद्ध की समाप्ति वास्तव में और अधिक बेरोजगारी तथा आर्थिक परेशानियां ही लेकर आई। फिर भी, लॉर्ड लिवरपूल की टोरी सरकार (1812-27) ने अपनी दमनकारी नीतियों को जारी रखा। 1816 में मैनचेस्टर के बुनकरों ने लंदन की ओर जो विरोध जुलूस 'मार्च ऑफ दि ब्लैकंटियर्स' निकाला था, उसे वापस खदेड़ दिया गया। भूमि के फिर से बंटवारे की मांग करने वाले स्पेंस के विद्रोह को भी राजद्रोह मानते हुए ही कुचल दिया गया।

किंतु राज्य की ओर से सबसे पाशविक कार्रवाई 1819 में मैनचेस्टर के पीटरलू पार्क में देखने को मिली जहां 60,000 लोगों की भीड़ लोकतांत्रिक सुधारों पर हेनरी हंट का भाषण सुनने को एकत्र हुई थी। भीड़ पर अंधाधुध गोलिया चलाई गईं। इस घटना में ग्यारह लोग मारे गए और चार सौ से भी अधिक घायल हो गए। पीटरलू को पुरानी पीढ़ी के नेतृत्व के देसी वाटरलू के रूप में याद रखा गया। पीटरलू की घटना से घबराकर पुरानी पीढ़ी के नेतृत्व ने बदनाम 'छः कानूनों' को पारित कर दिया और इस प्रकार समाचार पत्रों तथा राज़नीतिक सभाओं आदि पर नए प्रतिबिंध लगा दिए।

किंतु 1820 के बाद, लिवरपूल सरकार के दृष्टिकोण में विशेषकर आर्थिक तथा प्रशासनिक सुधारों के प्रति मध्यम वर्ग की मांगों के प्रति कुछ झुकाव दिखाई दिया। कैनिंग, हसकिसन तथा रॉबर्ट पील जैसे नए मंत्रियों के एक गुट ने अब सरकारी वित्त, सीमा शुल्क, पुलिस तथा अदालत आदि के क्षेत्र में कई सुधार लागू करने शुरू कर दिए। लॉर्ड ग्रे तथा लॉर्ड रसेल की विग सरकारों ने 1830 के दशक के दौरान कुछ और संवैधानिक तथा प्रशासनिक सुधार किए। इन सुधारों ने ब्रिटेन को एक आधुनिक अर्थ व्यवस्था तथा प्रशासन की ओर ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकार के सुधारों को लागू करने की तत्परता ने देश के जमींदार तथा पूंजीवादी वर्गों के बीच संबंध बनाने की दिशा में अच्छा कार्य किया।

फिर भी यह काल पूरी तरह से टकरावों से मुक्त नहीं रहा। 1831-32 के संसदीय सुधार को लेकर होने वाला संघर्ष तथा 1839 और 1848 के बीच उभरने वाला चार्टिस्ट आंदोलन ऐसी दो उल्लेखनीय घटनाएं हैं जो ब्रिटेन में विभिन्न सामाजिक वर्गों के बीच चलने वाले तनावों की गंभीरता को व्यक्त करती हैं।

2.7 सुधार अधिनियम, 1832

ब्रिटेन में 1832 के संसदीय सुधार अधिनियम का पारित होना वास्तव में आधुनिक राजनीति की ओर ब्रिटेन के संक्रमण की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी, क्योंकि इसके चलते ब्रिटिश राज्यतंत्र में उभरते मध्यम वर्गों के लिए एक महत्वपूर्ण स्थान तथा उसकी स्थिरता में इनका दावा सुनिश्चित हो गया।

अठारहवीं शताब्दी के अंत में औद्योगीकरण होने के समय से ही ब्रिटेन में संसदीय व्यवस्था में सुधार की मांग जोर पकड़ती जा रही थी। नए औद्योगिक केंद्रों का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के लिए, विशेषकर 1780 दशक से अनेक विधेयक संसद में लाए जा चुके थे। किंतु इनमें से किसी को भी पर्याप्त समर्थन नहीं मिला। जहां बर्डेट तथा ब्रूम एवं रसेल जैसे विग नेताओं के नेतृत्व में उग्र सुधारवादी सुधार के प्रति समर्पित थे, वहीं सत्ताधारी टोरी अभी भी किसी किस्म के संवैधानिक प्रवर्तन के विरूद्ध थे। इसके अतिरिक्त दोनों प्रमुख संसदीय गुट इस दृष्टिकोण पर एकमत थे कि लोकतंत्र अथवा मताधिकार का विस्तार देश के लिए खतरनाक था।

वर्ष 1830 में उदारवादी सम्राट विलियम चतुर्थ के गद्दी संभालने के साथ ही विग लोगों की एक लंबे अंतराल के बाद सत्ता में वापसी हुई। इस बार उनके नेता हुए लॉर्ड ग्रे। इससे सीमित संसदीय सुधार की संभावनाएं अच्छी हो गई। उसी वर्ष यूरोप के अनेक देशों में क्रांति हो गई और इससे ब्रिटेन में सुधारों के प्रयास को और बल मिल गया। इस प्रकार के दबावों में, हाउस ऑफ कॉमन्स ने एक के बाद एक दो सुधार विधेयक पारित कर दिए। किंतु इन दोनों ही विधेयकों को हाउस ऑफ लॉर्डस ने निरस्त कर दिया। इस बीच, ब्रिटेन के अनेक शहरों में सुधार समर्थक संगठन बन गए और बरमिंघम में टॉमस ऐटवुड तथा लंदन में फ्रांसिस प्लेस जैसे नेताओं ने दुकानदारों, कारीगरों तथा मजदूरों को संसदीय सुधार के पक्ष में लामबंद करने का प्रयास किया। संसद में चल रहे गतिरोध को समाप्त करने के लिए 1831 में कराए गए चुनावों में सुधार समर्थक विग एक बार फिर बहुमत से जीत कर आ गए। अंत में, हाउस ऑफ लॉर्डस को भी राजा की इस चेतावनी के आगे झुकना पड़ा कि वह नए सुधारवादी लॉर्ड खड़े कर देंगे और इस प्रकार 1832 में पहला सुधार अधिनियम लागू हो गया।

बहरहाल, इस अधिनियम का लक्ष्य ब्रिटेन के मौजूदा संविधान को बरकरार रखना था, इसे बदलना नहीं। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हाउस ऑफ कॉमन्स के चुनाव में कुछ सुधार लागू करने का प्रयास किया गया। इस अधिनियम में जहां एक ओर निचले सदन की 143 सीटों को औद्योगिक ब्रिटेन की आबादी के नए किस्म के फैलाव के अनुसार फिर से बांटने का प्रावधान था, वहीं इस अधिनियम के अंतर्गत उन 'जीर्ण शीर्ण' पुरों (बरो) अर्थात ऐसे संसदीय चुनाव क्षेत्रों को समाप्त कर दिया गया जहां सदस्यों की संख्या नगण्य थी और जनपदों तथा पुरों दोनों में ही मताधिकार के क्षेत्र को थोड़ा बहुत बढ़ा दिया गया। जनपदों में ऐसे तमाम पुरूषों को मतदान का अधिकार मिल गया जो 10 पौंड के पट्टेदार (कॉपीहोल्डर), तथा 50 पौंड के 'ऐच्छिक काश्तकार' और 40 शिलिंग के माफीदार (फ्रीहोल्डर) थे। दूसरी ओर पुरों में ऐसे तमाम मकानदारों को मतदान का अधिकार दिया गया जिनके पास 10 पौंड प्रति वर्ष अथवा उससे अधिक के आवास थे। इस नए मतदाता वर्ग की गिनती फिर भी छः लाख पुरूष से कम ही रही जो उस समय की ब्रिटेन की कुल आबादी का मात्र 3% थी।

इस प्रकार, इस अधिनियम ने यह सुनिश्चित कर दिया कि संपति का प्रभुत्व ब्रिटेन में जारी रहेगा। किंतु, स्थापित कुलीन तंत्र के साथ साथ इस अधिनियम में उभरते मध्यम वर्गों को भी देश की संसदीय सरकार में प्रतिनिधित्व दिया गया। इससे बुर्जुआ तथा जमींदार कुलीन वर्ग के बीच समझौते की स्थिति बनाने में बहुत मदद मिली और इस प्रकार ब्रिटेन में एक आधुनिक उदारवादी राज्यतंत्र की ओर शांतिपूर्ण संक्रमण का मार्ग प्रशस्त हुआ।

राज्य के वर्ग चरित्र को फिर से परिभाषित करने के अतिरिक्त, इस अधिनियम के कुछ अन्य दीर्घकालीन निहितार्थ भी थे, जिन पर गौर करना यहां महत्वपूर्ण होगा। पहली बात, इस अधिनियम को जिस ढंग से पारित किया गया उससे ऊपरी सदन के संबंध में हाऊस ऑफ कॉमन्स का महत्व और बढ़ गया और इससे विधायकों के ऊपर संसद से बाहर के दबावों की एक महत्वपूर्ण मिसाल भी कायम हुई। दूसरी बात, संसद के भीतर सुधारवादी कार्यक्रम 1832 के बाद बेहद मजबूत हो गया, क्योंकि प्रतिनिधित्व पा लेने वाले नए औद्योगिक केंद्रों से और भी अधिक सुधारवादी संसद में चुन कर आ गए और विग तथा टोरी दलों को भी मध्यम वर्ग में अपने समर्थन का विस्तार करने के लिए नए कार्यक्रम बनाने को विवश होना पड़ा।

आधुनिक राजनीतिक दलों के उभरने से चुनावी प्रतिस्पर्धा की स्थिति बनी और जनमत की लामबंदी ने भी अब राजनीति पर खासा प्रभाव डाला। 1832 तक विग तथा टोरी दल राजा की सरकार में असर बनाने के लिए गुटबंदी करने वाले गुटों के रूप में कार्य करते आए थे, किंतु संसद के भीतर या बाहर उनमें न कोई संगठन था, न कोई अनुशासन। सुधार अधिनियम के बाद, वे इस बात के लिए बाध्य हो गए कि वे अपने कार्यक्रमों को घोषित करें तथा देश के प्रत्येक स्थान तक अपने सांगठनिक तंत्र को फैलाएं और इन घोषित कार्यक्रमों तथा विस्तारित सांगठनिक तंत्र के आधार पर संसद में सत्ता प्राप्ति के लिए प्रतिस्पर्धा करें और अपने आपको आधुनिक राजनीतिक दलों के रूप में परिवर्तित करें। अब राजनीतिक दलों का अनुशासन संसद के भीतर ह्विप (Whip) के माध्यम से और चुनाव क्षेत्रों में केंद्रीय क्लबों तथा समितियों के निर्देशन में काम करने वाली प्रांतीय समितियों के माध्यम से संचालित होना था।

इस प्रकार टोरी लोगों ने कार्लटन क्लब की स्थापना की आर 1835 के टेमवर्थ घोषणापत्र के साथ सुधारवादी अनुदारवाद की नीति को अपनाया। उसी वर्ष, विग, उग्र सुधारवादियों तथा आयरिश प्रतिनिधियों के बीच हुए

लिचफील्ड समझौते ने उन्नीसवीं शताब्दी की लिबरल पार्टी (उदारवादी दल) की नींव रख दी। संसद के नए सदस्यों को अपने चुनाव क्षेत्रों तथा राजनीतिक दलों दोनों के ही दबावों का भी सामना करना पड़ा। 1841 तक अखबारों के लिए चुनाव परिणामों को लिबरल तथा कंजर्वेटिव दलों के फायदे के रूप में वर्गीकृत करके देखना आम बात हो गई थी। यह राजनीति में उस क्रांति की बाहरी अभिव्यक्ति थी जिसका निर्माण लगभग दो शताब्दियों से हो रहा था।

ब्रिटेन में संसदीय राजनीति का परिपक्व होना जिन अन्य कारकों पर निर्भर रहा, वे हैं संसद की कार्यवाही के संचालन के संबंध में राजनीतिक परिपाटियों का विकास, एक जिम्मेदार विपक्ष की भूमिका, कैबिनेट की सामूहिक जिम्मेदारी तथा सरकारों की उस स्पष्ट संसदीय बहुमत पर निर्भरता जिसके साथ उदारवादी राज्यतंत्र के सुचारू संचालन को जोड़ा जाता है। एक लिखित संविधान न होने की स्थिति में भी तमाम राजनीतिक पात्र उसका पालन करें तथा उसे मानें, यह ब्रिटेन के राज्यतंत्र की एक अनूठी विशेषता है। हालांकि इस प्रकार की परिपाटियों तथा प्रक्रियाओं को बनने में कई साल लग गए और इतिहास की किसी एक घटना के साथ इन्हें जोड़ कर देखना अभी भी कठिन हैं, फिर भी उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य के दशकों को इनकी निर्माण प्रक्रिया का एक निर्णायक काल माना जा सकता है, यह वह समय था जब रॉबर्ट पील तथा विलियम ग्लैडस्टोन जैसे नेता सत्ता तथा विपक्ष में भी इनके पालन पर अधिक जोर दे रहे थे।

इस काल में ब्रिटेन में उदारवादी राज्यतंत्र के परिपक्व होने का एक महत्वपूर्ण प्रमाण था उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में संसदीय राजनीति के दायरे में कॉर्न लॉ (अन्न व्यापार कानून) विवाद का समाधान। कॉर्न लॉ को 1815 में ब्रिटेन के जमींदार वर्ग को उनकी प्रधान उपज पर अच्छा मुनाफा दिलाने के उद्देश्य से पारित किया गया था। इसके लिए विदेशों से आने वाले सस्ते अनाज पर बढ़ा-चढ़ा कर सीमा शुल्क लगाया गया। इससे स्पष्ट रूप से उन सभी के हितों को चोट पहुंची जिन्हें बाजार से अनाज खरीदना पड़ता था। इनमें मजदूर तथा मध्यम वर्गों के लोग शामिल थे। उद्योगपतियों ने भी इन कानूनों को एक गंभीर बोझ ही माना क्योंकि इनके चलते उन्हें श्रमिकों को और भी अधिक गुजारा भत्ता देना होता था। बाजार के प्रगतिशील उदारीकरण के युग में, ये कानून सचमुच असंगत लगते थे और इन्हें अधिकांश लोगों ने 'रोटी पर कर लगाने वाले अल्पतंत्र' की ओर से राज्य द्वारा लोभपूर्ण शोषण का प्रतीक माना।

अन्न व्यापार कानूनों के विरोध ने उस शताब्दी के दूसरे चतुर्थांश (पच्चीस वर्ष की अवधि) में जोर पकड़ा। 1839 में, मध्यम वर्गों ने रिचर्ड कॉबडेन के नेतृत्व में अन्न व्यापार कानून विरोधी लीग का गठन किया और इन घृणित कानूनों की समाप्ति के लिए एक राष्ट्रव्यापी अभियान छेड़ दिया। यह अभियान इस बात का अच्छा उदाहरण था कि एक राजनीतिक आंदोलन किस तरह संसदीय विधान के माध्यम से प्राप्त किए जाने वाले एक सुस्पष्ट उद्देश्य के लिए प्रचार के आधुनिक साधनों का इस्तेमाल करता है। हालांकि लीग ने कई क्षेत्रों में मजदूरों का समर्थन जुटाया, फिर भी उसने अपने आपको अन्न व्यापार कानूनों की समाप्ति के एकमात्र उद्देश्य तक सीमित रखा और कुलीन तंत्र की संपदा तथा विशेषाधिकारों को और बड़ी चुनौती देने से अपने आपको अलग रखा। साथ ही यह बात भी दिलचस्प है कि इन कानूनों को समाप्त करने का काम किसी उदारवादी नहीं, अपितु रॉबर्ट पील की जमींदार समर्थक टोरी सरकार ने 1846 में किया। इससे ब्रिटेन में एक बार फिर जमींदार तथा पूंजीवादी कुलीन वर्ग के बीच सामंजस्य की भावना को स्थापित किया, जबकि ये वर्ग अब संसदीय राजनीति के ढांचे के अंदर क्रियाकलाप करने को प्रतिबद्ध थे।

बोध प्रश्न 2

1) सुधार की कुछ प्रमुख मांगों का विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

2) सुधार अधिनियम, 1832 की प्रमुख विशेषताएं क्या थीं? 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

3) कॉर्न लॉ (अन्न व्यापार कानून) क्या था? 50 शब्दों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

2.8 आधुनिकीकरण की ओर राज्य

उदारवादी राज्य को अनेक पूंजीवादी देशों ने एक आदर्श रूप में स्वीकार किया है। इस प्रकार के विकास को जिन देशों ने सबसे पहले अपनाया, उनमें ब्रिटेन भी एक था। इस सिलसिले में इसके सबसे आगे रहने का एक कारण था जल्दी औद्योगीकरण कर लेने में इसका सफल रहना। दूसरे, अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटिश राज्य के पास पहले से ही अपनी कुछ अलग विशेषताएं थीं जिन्होंने वहां एक आधुनिक उदारवादी राज्यतंत्र के उभरने के लिए एक मजबूत नींव का काम किया।

उदाहरण के लिए, ब्रिटेन उन कुछ देशों में था जो आधुनिक काल के प्रारंभ में एक राष्ट्र राज्य के रूप में उभरे। ट्यूडर और फिर हनोवर वंशों के काल में भी ब्रिटेन ने राजनीतिक स्थिरता हासिल की। इन अवधियों में सामंती गुटों के बीच लड़ाईयां बंद हुईं, किसी बाहरी आक्रमण के विरूद्ध मजबूत प्रतिरक्षा व्यवस्था बना ली गई और उसमें अपने 'मिश्रित संविधान' के प्रति अभिमान का भाव बना। 1688 की 'गौरवशाली क्रांति' के बाद इस शताब्दी में ब्रिटिश राज्यतंत्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता रही व्यापक राजनीतिक हिंसा में अपेक्षाकृत कमी, चाहे वह सत्ताधारी वर्गों के बीच गुटीय लड़ाईयों के रूप में रही हो, चाहे व्यापक स्तर पर होने वाली जन अशांति के रूप में, और चाहे हिंसक सरकारी दमन (या संगठित अपराध) के रूप में। इसके साथ ही 'संसद में राजा' के राजकीय अधिकार में वृद्धि हुई और ब्रिटेन के भीतर चर्च, सामंतों तथा स्वायत्तशासी समुदायों को अधीनता की स्थिति मिली। ब्रिटेन के नागरिकों में (आयरलैंड के बाहर) एक राष्ट्रीय अस्मिता का विकास अत्यंत महत्वपूर्ण रहा।

जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, इस बीच ब्रिटिश राज्यतंत्र सम्राटों के मनमाने अधिकारों पर रोक लगाना भी शुरू कर रहा था और यह स्थिति उसे यूरोप के निरंकुशतावादी राज्यों से अलग करती थी। इसमें अन्य बातों के अतिरिक्त अधिकारों का बंटवारा तथा विधान के ऊपर संसद का नियंत्रण, कॉमन लॉ की परंपरा तथा अत्यधिक स्वाधीन न्यायपालिका और कम से कम जमींदार वर्गों के लिए उदारवादी 'अधिकारों' का वायदा शामिल थे।

इन विशिष्ट विशेषताओं के बावजूद, अठारहवीं शताब्दी के ब्रिटेन को अभी भी आधुनिक नहीं कहा जा सकता था। उसके पास न तो पेशेवर नौकरशाही थी, न पुलिस और न ही वित्तीय तथा मुद्रा संबंधी व्यवस्थाएं और उसके लिए यह जरूरी था कि वह एक 'स्वतंत्र/ मुक्त बाजार' का और भी विकास करें, चुनावी सुधार लागू करे और कैथोलिक, मजदूरों तथा स्त्रियों जैसे अल्पसंख्यक वर्गों तक नागरिक अधिकारों का विस्तार करे। एक आधुनिक उदारवादी राज्यतंत्र के अधीन संसाधन तथा पूंजी जुटाने का काम न केवल एक पेशेवर प्रशासन के विकास पर, अपितु मजदूर वर्ग के दमनपूर्ण नियंत्रण तथा उभरते मध्यम वर्गों को समायोजित करने हेतु संसदीय सरकार के विकास पर भी निर्भर करता था। इसके लिए कुछ और बातें भी आवश्यक थीं, जैसे, नौकरशाहीकरण तथा लोकतंत्रीकरण के बीच एक सतर्क संतुलन स्थापित करना, नागरिक अधिकारों के विस्तार तथा स्थानीय

शासन के सुधार के साथ केंद्रीकरण, और सामाजिक सेवाओं तथा कल्याण योजनाओं के साथ मुक्त बाजार का विकास और सर्वोपरि या राज्य के वैचारिक अधिपत्य को बनाए रखने के नए तथा अधिक सूक्ष्म तरीके।

2.8.1 संवैधानिक सुधार

प्रतिनिधि संस्थाओं तथा लोकतांत्रिक व्यवस्था का विकास ब्रिटेन में उभरते आधुनिक राज्य की एक बुनियादी विशेषता थी। इस प्रक्रिया के धीरे धीरे आगे बढ़ने की प्रकृति विशेष रूप से उल्लेखनीय है। ब्रिटेन को संसदीय सरकारों की जननी के रूप में याद किया जाता है और ब्रिटिश संसद की शक्तियों के विकास की शुरुआत सामंती युग में देखी जा सकती है। दूसरी ओर, यह एक दिलचस्प तथ्य है कि ब्रिटेन में आज भी सम्राट ही आधिकारिक शासनाध्यक्ष होता है और अधिकारविहिन ऊपरी सदन में जन्म के आधार पर आने वाले सदस्य (लॉर्ड) होते हैं। इसी प्रकार, यह माना जाता है कि ब्रिटेन में नागरिक अधिकारों का लंबा इतिहास है, किंतु ब्रिटिश राज्य धर्म निरपेक्ष होने का दावा नहीं करता और चर्च ऑफ इंग्लैंड आज भी अधिकारिक धर्म का प्रतीक है। वैसे, राजनीतिक सत्ता के तत्व में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ, हालांकि परंपरा का बाहरी स्वरूप बरकरार रहा।

हमने देखा कि कैसे कैबिनेट व्यवस्था का विकास, सम्राट के संरक्षकत्व की समाप्ति तथा संसदीय कार्यवाहियों का प्रभावित होना, चुनाव सुधार, तथा राजनीतिक दलों का विकास, सभी 1780 और 1850 के बीच एक महत्वपूर्ण संक्रमण की स्थिति से गुजरे। इनमें से अधिकांश मामलों में भी बदलाव के प्रति उसी क्रमिकता के दृष्टिकोण को लेकर चला गया। लोकतांत्रिक सुधारों को किश्तों में संसदीय सुधार अधिनियमों के माध्यम से 1832, 1867, 1870, 1884, 1911 तथा 1918 में लागू किया गया।

2.8.2 प्रशासनिक पुनर्संरचना

संविधानगत सुधारों के साथ प्रशासनिक ढांचे में आमूलचूल परिवर्तन इस काल के दौरान राज्य के आधुनिकीकरण का एक ओर प्रमुख पहलू था। नए प्रशासनिक दृष्टिकोण का मुख्य स्वर था केंद्र सरकार के अधीन प्रत्येक विभाग से जुड़े निरीक्षकों के कार्यालय और जांच आयोगों के माध्यम से केंद्रीकरण तथा नियंत्रण।

वित्तीय तथा सीमा शुल्क संबंधी सुधारों की मांग भी उभरते माध्यम वर्गों की कार्य सूची में काफी ऊपर थी। उदारवादियों, उग्र सुधारवादियों तथा उपयोगितावादियों और अनुदारवादियों सहित सभी राजनीतिक गुटों ने अलग अलग ढंग से इस प्रक्रिया का समर्थन किया। विलियम पिट की सरकार (1783-1801) ने इस सिलसिले में कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए। 1820 के दशक में एक बार फिर लॉर्ड लिबरलपूल की सरकार के मंत्रियों हसकिसन तथा ग्लैडस्टोन ने सीमा शुल्क में कटौती को तेज किया और वित्तीय क्षेत्र में और अधिक अनुशासन लागू किया।

इसी अवधि में दंड कानूनों तथा जेलों में सुधार किए गए, एक स्थायी पुलिस बल का गठन किया गया तथा सशस्त्र बलों में सुधार लागू किए गए। किंतु सर्वाधिक महत्वपूर्ण बदलाव था एक पेशेवर नौकरशाही का विकास। इस नौकरशाही की कार्यप्रणाली का आधार तर्कसंगत होता था और इसकी नियुक्ति तथा प्रोन्नति का आधार संरक्षकत्व या गुटीय निष्ठा न होकर प्रतियोगी परीक्षाएं तथा योग्यता होती थी। किंतु, उन्नीसवीं शताब्दी के ब्रिटेन में इसके लगातार विस्तार करने को चिंता की दृष्टि से देखा गया।

2.8.3 बाजार सुधार

उभरते आधुनिक राज्य की चिंता का एक और अहम विषय था तेज औद्योगिक विकास के लिए एक 'मुक्त बाजार' का निर्माण। राज्य ने अब समूची अर्थव्यवस्था के विकास को सुगम बनाने का लक्ष्य अपनाया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राज्य ने किन्हीं विशेष कंपनियों अथवा व्यापार समूहों को सीधे सीधे सहारा देने के स्थान पर अनुबंधों, संपति तथा निजी उद्यम को कानूनी संरक्षण तथा व्यवस्था का वातावरण देना शुरू किया। साथ ही, राज्य के दमनकारी तंत्र तथा कानूनों का इस्तेमाल मजदूरों को पूंजीपति वर्ग की जरूरतों के अनुसार दबाने के लिए किया गया। इस प्रकार के 'मुक्त बाजार' को स्थापित करने के लिए अनेक उपाय आवश्यक थे। इसके

लिए अठारहवीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से अनेक उन्मूलनों की शुरुआत की गई, जैसे, कीमतों तथा वेतन (दिहाड़ी) पर नियंत्रण को समाप्त किया गया, व्यापार पर लागू प्रतिबंधों तथा उपदान (सब्सिडी) को समाप्त किया गया और राज्य समर्थित एकाधिकारों को भी समाप्त किया गया। आंतरिक बाजार को एकजुट करने का भी इसमें आग्रह रहा और 1786 तथा 1820 के दशक के सीमा शुल्क के सुधारों की परिणति 1846 में अन्न व्यापार कानून की समाप्ति में हुई।

वर्ष 1834 के नव दरिद्र कानून (न्यू पुअर लॉ) में गरीबों के लिए स्थानीय कल्याण अथवा राहत की शर्तों को अत्यधिक कठोर बना दिया गया और इस प्रकार इस कानून ने एक मुक्त बाजार की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। आर्थिक सुधारों के अन्य महत्वपूर्ण पहलू थे 1737 तथा 1844 के करेंसी तथा बैंकिंग सुधार, 1844 का कंपनी कानून और 1849 में नेवीगेशन कानूनों की समाप्ति। 1860 की कॉबडेन-शवाल्ये संधि से अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में एक मुक्त व्यापार शासन की स्थापना का कार्य बहुत हद तक संपन्न हो गया।

2.8.4 कल्याण राज्य की ओर

एक मुक्त बाजार शासन की स्थापना के बाद पुराने समय से चली आ रही समर्थक व्यवस्थाओं को हटाने से उत्पन्न स्थितियों को संतुलित करने के लिए जवाब में केंद्र तथा स्थानीय सरकारों को नए कल्याणकारी उपायों को बढ़ावा देना पड़ा। नए औद्योगिक शहरों की दारूण स्थितियों तथा मजदूर वर्गों की बढ़ती मांगों ने आधुनिक राज्य को इस दिशा में बढ़ने को बाध्य कर दिया। एक सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली की शुरुआत 1833 के अधिनियम से हुई, जब सहायक अनुदान (ग्रांट्स इन एड) तथा स्कूल निरीक्षण की व्यवस्था भी शुरू की गई। किंतु धार्मिक गुटों के बीच चलने वाले विवादों ने इस प्रमुख मुद्दे पर बदलाव की गति को धीमा कर दिया।

इसी प्रकार, जब चैडविक ने 1848 में स्थापित सार्वजनिक स्वास्थ्य परिषद् (पब्लिक हेल्थ बोर्ड) के माध्यम से सफाई योजनाओं को लागू करने के लिए ज़ोरदार किंतु विवादास्पद प्रयास किए तो उसके बाद एक सार्वजनिक स्वास्थ्य नीति का विकास हुआ। 1835 के नगरपालिका सुधार अधिनियम के अंतर्गत सार्वजनिक सुविधाओं के विकास का अनुबंध स्थानीय निकायों को दे दिया गया, किंतु इसने उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में जाकर ही गति पकड़ी, जब चैम्बरलेन जैसे नेताओं ने 'गैस एवं जलगत समाजवाद' की हिमायत की।

आम कल्याणकारी योजनाओं के अतिरिक्त, आधुनिक उदारवादी राज्यतंत्र के सामने अलग अलग सामाजिक गुटों की विशिष्ट मांगों को पूरा करने की भी चुनौती थी। इस संदर्भ में मजदूरों की समस्याएं विशेष रूप से गंभीर थीं। किंतु प्रारंभिक औद्योगिक राज्य मजदूरों को यूनियन बनाने या शांतिपूर्वक हड़ताल करने के मौलिक अधिकार देने में भी सुस्त रहा। यूनियन बनाने के विरूद्ध गठबंधन विरोधी अधिनियम 1799 में पारित किया गया और शुरुआती दौर के मजदूर आंदोलनों को हिंसक ढंग से दबा दिया गया। दरिद्रों को राहत देने की मौजूदा व्यवस्था को भी व्यर्थ मानते हुए 1834 के नव दरिद्र कानून के अंतर्गत समाप्त कर दिया गया। सर्वहारा वर्ग की बढ़ती तंगहाली तथा मानवतावादी गुटों की ओर से पड़ने वाले दबावों तथा स्वयं मजदूर आंदोलनों ने राज्य को बाध्य कर दिया कि वह अब सीमित सुधार के लिए कदम उठाए। गठबंधन विरोधी कानूनों को 1824 में समाप्त कर दिया गया। पहला फैक्ट्री अधिनियम 1833 में पारित किया गया और वह भी (एक सुधारवादी धार्मिक संगठन) इवेंजोलिकल्स के दबाव में बच्चों को कुछ संरक्षण देने के लिए। आगे के सुधार छोटी छोटी किस्तों में आए, जैसे खदान अधिनियम (1842), दस घंटे का कार्य दिवस (1847), यूनियनों को वैधता की मंजूरी (1871) और शांतिपूर्ण धरना (1876)।

मजदूरों के अतिरिक्त, सुधारों की मांग करने वाले अन्य सामाजिक वर्ग थे धार्मिक अल्पसंख्यक तथा स्त्रियां। मैरी वॉलस्टोनक्राट तथा जॉन स्टुअर्ट मिल जैसे कुछ उदारवादियों के स्त्रियों के अधिकारों की वकालत करने के बावजूद, स्त्रियों को वोट का अधिकार प्रथम विश्व युद्ध के बाद ही मिल पाया। हम कह चुके हैं कि ब्रिटिश राज्य अधिकारिक तौर पर आज भी धर्म निरपेक्ष नहीं है। हालांकि यहां पर सांस्कृतिक बहुलवाद की प्रथा है। वैसे हमारे काल के पहले अल्पसंख्यकों, विशेषकर कैथोलिकों के साथ अहितकारी भेदभाव बहुत आम थे। 1828 के टेस्ट एवं कारपोरेशन अधिनियम तथा 1829 के कैथोलिक राहत अधिनियम के परिणामस्वरूप और अधिक नागरिक समानता की स्थिति बनी। जन्म, विवाह तथा मृत्यु का सरकारी पंजीकरण भी 1836 में शुरू किया गया।

1) अठारहवीं शताब्दी में ब्रिटिश राज्य की प्रमुख विशेषताएं क्या थीं? 100 शब्दों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

2) ब्रिटिश राज्य ने अपनी प्रजा के कल्याण के लिए क्या क्या उपाय किए? 10 वाक्यों में अपनी विवेचना प्रस्तुत कीजिए।

....

....

....

....

2.9 श्रमिक आंदोलन

राज्य मजदूर वर्ग की मांगों को पूरा नहीं कर पाया। वास्तव में, मजदूर वर्गों की समझ में यह बात जल्दी ही आ गई थी कि संपति के स्वामित्व से जुड़े सीमित मताधिकार पर टिकी कोई भी संसद उनके कष्टों के प्रति सहानुभूति नहीं रखेगी। इसका परिणाम यह रहा कि उनमें से अनेक ने स्वाधीन मजदूरों की सभा या सहकारी समितियों जैसी गैर संसदीय संस्थाओं के निर्माण की ओर अपना रूख किया या फिर सार्वजनिक मताधिकार, गुप्त मतदान तथा सभी सांसदों के लिए वजीफा जैसी क्रांतिकारी मांगें उठानी शुरू कर दीं। कुछ ने तो भूमि के फिर से बंटवारे, कारखानों पर मजदूरों के कब्जे तथा एक ऐसी समाजवादी व्यवस्था का भी प्रचार कर डाला जिसका आधार व्यक्ति-व्यक्ति के बीच आर्थिक प्रतिस्पर्धा न होकर समानता के सामूहिक आदर्श रहें।

किंतु, उच्च वर्ग ऐसी तमाम मांगों को रद्द करने हेतु कटिबद्ध थे। उनका इरादा था कि औद्योगीकरण के प्रारंभिक चरण में जो पूंजी का तेज गति से विकास हुआ है, उसकी भारी कीमत मजदूरों से वसूली जाए। उन्नीसवीं शताब्दी के आते आते कारीगरों तथा कुछ मध्यमवर्गीय कार्यकर्ताओं के सामूहिक नेतृत्व में उग्र सुधारवादी आंदोलन भी हुए। ब्रिटिश राज्य ने इनके विरूद्ध दमन का रवैया अपनाया, जिसकी परिणति 1819 के पीटरलू नरसंहार में हुई।

उसी दौर में, एक स्वाधीन मजदूर आंदोलन खड़ा हो रहा था, जिसकी अपनी सहकारी समितियां थीं, मैत्री संगठन थे, अखबार तथा दूकानें थीं और हड़ताली यूनियनें भी थीं। यह आंदोलन पहले की उग्र सुधारवादी परंपरा से हट कर था, क्योंकि इसके पास अपना सर्वहारा नेतृत्व था, आर्थिक मांगों की एक स्वतंत्र सूची थी और अधिक दीर्घकालिक संगठन था।

तमाम मजदूरों को एक आम ट्रेड यूनियन से जोड़ने तथा एक आम हड़ताल के लिए एक जुटता बनाने के पहले प्रयासों ने 1820 तथा 1830 के दशकों में गति पकड़ी। 1834 में ग्रैंड नेशनल कनफेडरेशन ऑव ट्रेड यूनियन्स (जी एन सी टी यू) का गठन किया गया, इसका उद्देश्य दस घंटे के कार्य दिवस जैसी कार्य स्थितियों तथा बेहतर वेतन की मांग करने हेतु एक व्यापक मजदूर आंदोलन को ठोस आकार देना था। इसके कुछ सदस्य तो ओवनशाही स्वर्ण युग की अपेक्षा भी करने लगे, जिसमें मजदूर स्वयं अपनी सहकारी समितियों के अधीन उद्योग चला कर अपनी मेहनत के पूरे फल का आनंद उठाएंगे। ओवन के अपने विचार भी समय बीतने पर बदल गए। 1829 में उसके नई दुनिया से वापस आने के बाद, उसे ब्रिटेन में उभरते ट्रेड यूनियन आंदोलन का एक प्रमुख प्रवक्ता स्वीकार कर लिया गया। किंतु, जल्दी ही उसके तथा नई पीढ़ी के नेताओं के बीच मतभेद उठ खड़े हुए। आगे हम इसी पर चर्चा करेंगे।

उसी दौरान, राज्य का तंत्र भी हरकत में आ गया और तमाम यूनियनों के विरूद्ध व्यापक गिरफ्तारियों के आदेश दे दिए गए। उदाहरण के लिए, डॉरसेटशायर में फ्रैंडली सोसायटी ऑव ऐग्रीकल्चरल वर्कर्स को भंग कर दिया गया और इसके छः आयोजकों को मात्र 'गोपनीय शपथ लेने' के आधार पर सात साल की काला पानी की सजा दे दी गई। ये लोग टॉलपडल शहीदों के रूप में मशहूर हो गए और लंबे समय तक चले मजदूर आंदोलन के बाद ही 1839 में उनकी वापसी हुई।

इस बीच आर्थिक मंदी का दौर आ चुका था जिसके परिणामस्वरूप मजदूरों के वेतन में और भी कटौती कर दी गई और व्यापक बेरोजगारी फैल गई। उस समय मालिकों अथवा राज्य की ओर से सामाजिक सुरक्षा का कोई प्रावधान तो था नहीं, इसलिए पूरे ब्रिटेन में मजदूरों पर इस स्थिति का अत्यंत बुरा प्रभाव पड़ा। यहां तक कि शासक वर्ग भी अब यह स्वीकार करने को विवश हो गए थे कि औद्योगिक ब्रिटेन 'दो राष्ट्रों' की तरह दिखने लगा था, जो दो अलग अलग संसारों में रहने वाले अमीर तथा गरीब के बीच विभाजित था, जिनके बीच कोई भी संवाद, सहानुभूति अथवा समानता नहीं थी।

इधर शासक वर्ग तो इस प्रकार तीस के अशांत दशक में 'इंग्लैंड की दशा' के सवाल पर बहस कर रहा था, उधर कुछ मजदूर नेता आत्म सहायता तथा सहकारी समितियों पर ओवन के जोर पर सवाल उठाने और उसके स्थान पर मजदूरों के लिए राजनीतिक अधिकारों की मांग करने लग गए थे। 1836 में, सार्वजनिक मताधिकार की मांग करने के लिए लवेट जैसे व्यक्तियों ने लंदन वर्किंग मेन्स एसोसिएशन की स्थापना की। विलियम मौरिस तथा स्मिथ ओ'ब्रायन जैसे उग्र सुधारवादियों ने भी एक ऐसे समाज के निर्माण के लिए मजदूरों में एक नई जागृति का आह्वान किया जिसमें वे 'समाज के सबसे निचले स्तर पर न हो कर सबसे ऊपर रहेंगे, या यह ऐसा समाज होगा जिसमें न कोई सबसे ऊपर होगा, न कोई सबसे नीचे।'

2.10 चार्टिस्ट आंदोलन

ब्रिटेन के मजदूरों ने 1830 तथा 1840 के दशकों में राजनीतिक सत्ता पर बढ़ते ध्यान का जो प्रदर्शन किया, उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण परिणाम चार्टिस्ट (चार्टरवादी) आंदोलन के रूप में सामने आया। इस आंदोलन का नाम उस छः सूत्रीय 'चार्टर' (घोषणा पत्र/ अधिकार पत्र) के नाम पर पड़ा जिसे संसद के समक्ष प्रस्तुत किया गया था। इसमें सार्वजनिक मताधिकार, गुप्त मतदान, वार्षिक संसद, समान चुनाव क्षेत्रों, हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के लिए संपति की योग्यता को समाप्त करने तथा उन्हें नियमित वेतन देने की मांगें थीं। 1839 में, पहला चार्टिस्ट अधिवेशन लंदन में हुआ, किंतु इसकी याचिका हेतु दस लाख हस्ताक्षर एकत्र होने के बावजूद संसद ने इसे सिरे से रद्द कर दिया।

इस प्रकार की दो टूक पराजय ने याचिका के तरीके में अनेक चार्टरवादियों की आस्था को हिला कर रख दिया और फर्गस ओ'कोनर तथा ओ'ब्रायन जैसे कुछ चार्टरवादियों ने तो यह इच्छा रखी कि आंदोलन को देहातों तक फैलाया जाए या एक आम हड़ताल की घोषणा की जाए और आवश्यक हो तो बल प्रयोग भी किया जाए। नवम्बर 1839 में, हजारों वेल्श कोयला खनकों ने न्यूपोर्ट की ओर सशस्त्र कूच किया। किंतु, इन क्रांतिकारी विकल्पों पर एकजुटता नहीं बन पाई और हालांकि 1842 में एक और चार्टरवादी याचिका संसद में प्रस्तुत की गई, फिर भी चालीस के दशक के मध्य में होने वाली आर्थिक बहाली ने अधिकांश मजदूरों का ध्यान एक बार फिर उग्र सुधारवादी राजनीति की ओर से हटा कर ट्रेड यूनियनों की गतिविधियों के माध्यम से वेतन में सुधारों की ओर कर दिया।

चार्टरवाद की लौ एक बार फिर 1848 में अंतिम बार झिलमिलाई। यह वर्ष पूरे यूरोप में क्रांतियों का वर्ष था। संसद में साठ लाख हस्ताक्षरों की एक विशाल याचिका प्रस्तुत करने के लिए पाँच लाख चार्टरवादियों का एक विराट प्रदर्शन लंदन के मध्य में स्थित केनिंगटन कॉमन्स में आयोजित किया गया। किंतु लचर आयोजन तथा असमय की बारिश ने इस संकट को टालने की दिशा में सरकार का साथ दिया और अंत में चार्टरवादियों की मांगों को रद्द कर दिया गया। उसके बाद की अवधि में बनने वाली आर्थिक संपन्नता की स्थिति ने एक बार फिर ब्रिटिश मजदूरों के ध्यान को राजनीतिक मांगों से हटा कर आर्थिक आत्म सहायता की ओर लगा दिया, जिसका एक महत्वपूर्ण प्रतीक 1844 में स्थापित होने वाला राचडेल स्टोर था। 'इंटरनेशनल वर्किंग मेन्स एसोसिएशन' का नेतृत्व लंदन में ... के कार्ल मार्क्स के प्रयासों के प्रति उदासीन प्रतिक्रिया इसका एक और प्रतीक था।

जनता का छ: सूत्रीय चार्टर

1) एक वोट उस प्रत्येक व्यक्ति के लिए जो इक्कीस वर्ष का हो चुका है, मानसिक रूप से स्वस्थ है, और जिस पर किसी अपराध के लिए सजा नहीं चल रही है।
2) मतपत्र - मताधिकार के प्रयोग में मतदाता को संरक्षण देने के लिए।
3) संपत्ति की योग्यता की अनावश्यकता — सांसदों के लिए, जिससे कि चुनाव क्षेत्र अपनी पसंद के व्यक्ति को चुनकर भेज सकें, चाहे वह अमीर हो या गरीब।
4) सदस्यों को भुगतान, जिससे यदि कोई ईमानदार व्यापारी, कामकाजी पुरुष, या अन्य कोई व्यक्ति देश के हित में कार्य करने हेतु अपना काम धंधा छोड़ कर आए तो वह अपने चुनाव क्षेत्र की सेवा कर सके।
5) समान चुनाव क्षेत्र, जिससे बड़े चुनाव क्षेत्रों के मतदाताओं को छोटे चुनाव क्षेत्रों के आगे बेबस होने देने के बजाए समान संख्या के मतदाताओं को समान अनुपात में प्रतिनिधित्व मिल सके।
6) वार्षिक संसद, जिससे घूस तथा धौंस पट्टी पर सर्वाधिक प्रभावी रोक लग सके, क्योंकि किसी चुनाव क्षेत्र को सात साल में एक बार तो (मतपत्र से भी) खरीदा जा सकता है, किंतु (सार्वजनिक मताधिकार व्यवस्था में) किसी भी चुनाव क्षेत्र को किसी भी धनराशि से प्रत्येक आने वाले बारह महीनों के लिए नहीं खरीदा जा सकता; और इसलिए भी क्योंकि जब प्रत्येक सदस्य को केवल एक साल के लिए ही चुना जाएगा तो वह अब की तरह अपने चुनाव क्षेत्र के लोगों की उपेक्षा अथवा उनके साथ विश्वासघात नहीं कर पाएगा।

वस्तुत: मार्क्स तथा उनके साथी फ्रेडरिक एंगल्स ने 'कम्युनिस्ट मैनिफेस्टो' का प्रकाशन 1848 में लंदन में हुए इंटरनेशनल वर्किंग मेन्स एसोसिएशन (आई डब्ल्यु एम ए) के पहले अधिवेशन में किया था। इसने समाजवादी चिंतन को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया और दुनिया भर के मजदूरों का आह्वान किया कि वे एक नए समतावादी समाज के लिए संघर्ष हेतु एकजुट हों, जिसकी सीमाएं शोषक पूंजीवादी व्यवस्था के पार जाएंगी। इस घोषणापत्र में निजी संपत्ति की समाप्ति पर आधारित एक वर्गमुक्त समाज की कल्पना को भी रखा गया।

आगे आपको उन ऐतिहासिक संघर्षों की और अधिक जानकारी दी जाएगी जिन्हें इस क्रांतिकारी घोषणापत्र ने दुनिया के अनेक देशों के मजदूरों के बीच प्रेरित किया। किंतु ब्रिटेन के संदर्भ में यह बात याद रखने योग्य है कि यहां क्रांतिकारी नहीं अपितु उदारवादी राजनीति ही मजदूरों की चिंता का प्रधान विषय बना रहा। इस शताब्दी के प्रारंभ में संसदीय राजनीति के लिए प्रतिबद्ध लेबर पार्टी के विकास ने इस प्रवृति को और भी सुनिश्चित कर दिया।

जिस एक प्रमुख कारक ने 'प्रथम औद्योगिक राष्ट्र' के मजदूर वर्ग को इस प्रकार की राजनीति की ओर अग्रसर किया, वह था वहां 'श्रमिक कुलीनतंत्र' का उदय। ये वे लोग थे जिनके बढ़ती औद्योगिक अर्थव्यवस्था में विशिष्ट कौशलों ने ब्रिटेन के विशाल साम्राज्य के बढ़ते लाभों के साथ मिलकर उन्हें एक आरामदेह जीवनशैली को बनाए रखने में समर्थ बनाया। इसके परिणामस्वरूप, 'श्रमिक कुलीनतंत्र' ने अपनी आस्था का स्रोत इस विचार को बनाया कि वे पूंजीवादी व्यवस्था के अंदर ही 'सुधार' के लिए काम करेंगे, इसे उलटने का प्रयास नहीं करेंगे। इन लोगों ने भी उसी आधार पर मताधिकार की आकांक्षा की जिस आधार पर मध्यम वर्गों ने की थी अर्थात उसकी स्थिति संविधान की रक्षा करने में अपनी उचित भूमिका निभाने वाले एक 'सम्माननीय' वर्ग की हो। यही नहीं, विक्टोरिया युग के इन कुशल मजदूरों ने आत्म सहायता पर जोर दिया और अपनी स्थिति सुधारने के लिए अपनी स्वयं की मित्र संस्थाएं तथा सहकारी समितियों तथा 'न्यू यूनियन्स' का भी विकास किया और क्रांति के मार्ग को शपथपूर्वक त्याग दिया।

इस प्रकार की प्रवृत्ति का परिणाम 1865 में 'रिफॉर्म लीग' के गठन के रूप में सामने आया। इस लीग का गठन श्रमिक कुलीनतंत्र ने मध्यम वर्गीय नेताओं के साथ मिल कर और अधिक संसदीय सुधारों की मांग उठाने के लिए किया। इसके प्रयासों का फल दो साल बाद सामने आया जब शहरी मजदूरों को अंतत: उनके वोट का अधिकार मिल गया। किंतु यह बात याद रखने योग्य है कि यह अधिकार देने वाला 1867 का सधार अधिनियम

किसी उग्र सुधारवादी जनांदोलन की नहीं, अपितु दलगत राजनीति की उपज थी। इस दलगत राजनीति में अनुदारवादियों (कंजर्वेटिवज) ने डिजरायली के नेतृत्व में वोट जुटाने के मामले में ग्लैडस्टोनशाही उदारवादियों को मात दे दी थी। इस प्रकार की राजनीति वास्तव में उभरते हुई आम पूंजीवादी व्यवस्था का मुख्य आधार बन रही थी।

दूसरे सुधार अधिनियम के पारित होने के बाद के दस बारह वर्षों में, शहरी मजदूर वर्ग इस प्रकार उदारवादी राज्यतंत्र के अंदर समायोजित कर लिया गया। इस प्रक्रिया में कुछ अधिनियमों का पारित होना महत्वपूर्ण रहा। जैसे, ट्रेड यूनियन बनाने का अधिकार देने वाला अधिनियम (1871), हड़ताल करने का अधिकार देने वाला अधिनियम (1876), और शैक्षिक तथा स्वास्थ्य संबंधी सुधार लागू करने वाले अधिनियम (क्रमश: 1870 तथा 1875)। किंतु इनमें से कोई भी उपाय अर्थव्यवस्था में बढ़ती असमानता को कम नहीं कर पाया, क्योंकि निजी या विरासत में मिली संपति पर भी कभी कोई सवाल नहीं उठाया गया। यहां तक कि लोकतंत्र तथा कल्याण भी ब्रिटेन के निम्न वर्ग के लोगों के लिए अभी तक कल्पना की ही बातें थीं और वर्तमान शताब्दी में ताजा आंदोलनों के बाद ही मजदूरों तथा नारी जाति की इन बुनियादी आकांक्षाओं को वास्तव में पूरा करने का काम उदारवादी राज्यतंत्र कर पाया है।

विकास की ये सब बातें अभी भविष्य के गर्भ में ही थीं, किंतु उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक ब्रिटेन में चार्टरवादी आंदोलन द्वारा उठाए गए वर्ग संबंधी सवाल को अत्यधिक शांतिपूर्वक ढंग से हल करके एक निर्णायक सीमा को पार कर लिया गया था। इस प्रकार के टकरावों के समाधान के लिए केंद्रीय तंत्र के रूप में संसदीय तथा चुनावी राजनीति को स्वीकार किया जाना इस समझौते को आकार देने की दिशा में महत्वपूर्ण था।

प्रथम औद्योगिक राष्ट्र में इस प्रकार के राजनीतिक समाधान की ओर ले जाने वाले प्रमुख कारक थे : मजदूरों के सापेक्ष इसके उच्च वर्गों द्वारा प्रदर्शित एकता, फैलते हुए ब्रिटिशसाम्राज्य के आर्थिक लाभ, उन्नीसवीं शताब्दी के ब्रिटेन में क्रांतिकारी राजनीति का अपेक्षाकृत कमजोर होना तथा देश में कल्याणकारी विधान का तदनांतर विकास।

किंतु, ब्रिटेन के संविधान में मताधिकार के विस्तार के अतिरिक्त कुछ अन्य संस्थागत बदलाव भी करने पड़े जिससे कि इस संक्रमण को स्थायी आधार दिया जा सके। इस उद्‌देश्य की प्राप्ति किन तरीकों से की गई तथा इस प्रक्रिया में ब्रिटिश राज्य ने अंतत: क्या स्वरूप धारण किया, इस पर हम आगे विचार करेंगे।

बोध प्रश्न 4

1) मजदूर वर्ग की प्रमुख शिकायतें क्या थीं? 10 वाक्यों में उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

2) चार्टरवादी (चार्टिस्ट) आंदोलन पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

....

....

....

....

....

2.11 सारांश

ब्रिटेन के राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में 1750 के दशक में जमींदार कुलीनतंत्र का वर्चस्व था और अर्थव्यवस्था का आधार कृषि थी। लोगों के जीवन में सरकार की कोई सक्रिय भूमिका नहीं थी। किंतु 1760 के दशक तक स्थिति यह हो गई कि ब्रिटेन ऐसा पहला राष्ट्र बन गया जिसने अपने राज्यतंत्र, समाज तथा अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए, और इस प्रकार औद्योगीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत की। इस इकाई में हमने यह विचार किया कि ब्रिटेन में किस प्रकार नए रंग की राजनीतिक विचारधाराओं का विकास हुआ और किस प्रकार ब्रिटेन एक उदारवादी तथा लोकतांत्रिक बदलाव के माध्यम से आधुनिक बना। हमने यह भी समझने का प्रयास किया कि किस प्रकार ब्रिटेन के उभरते मध्यम वर्ग तथा शासक कुलीन वर्ग ने सुधारों के माध्यम से मजदूर आंदोलनों को संसदीय राजनीति के व्यापक ढांचे के अंदर ही दबाने में सफलता प्राप्त की।

2.12 शब्दावली

औद्योगिक पूंजीवाद : यह पूंजीवाद का वह चरण है जिसकी विशेषता थी नई संपदा का बनना, बड़े उद्योगों का एक नया वर्ग, अधिक मशीनीकरण, नए बाजारों की तलाश।

अल्पतंत्र : ऐसा शासन तंत्र जिसमें मुठ्ठी भर लोगों के पास सारी सत्ता होती है।

सर्वहारा विद्रोह : उन मजदूरों का विद्रोह जो दिहाड़ी के लिए काम करके अपनी रोजी रोटी कमाते हैं।

सार्वजनिक मताधिकार : बिना किसी पूर्व योग्यता के, सभी व्यस्कों को वोट देने का अधिकार।

कालक्रमानुसार तालिका

घरेलू राजनीति

1760	जॉर्ज तृतीय का सत्ता में आना।
1763	नॉर्थ ब्रिटेन विवाद (विल्क्स कांड)
1768	मिडिलसेक्स चुनाव (विल्क्स कांड)
1769	सोसायटी फॉर दि डिफेंस ऑफ दि बिल ऑफ राइट्स
1770-82	लॉर्ड नॉर्थ की सरकार
1780	डनिंग का प्रस्ताव; संविधानगत सूचना संगठन; गॉर्डन के दंगे।
1783	फॉक्स नॉर्थ गठबंधन
1785	संसदीय सुधार विधेयक लाया गया
1788	रीजेंसी संकट
1791	दासता विधेयक की समाप्ति
1794	बंदी प्रत्यक्षीकरण का निलंबन
1795	राजद्रोही सभा अधिनियम
1790 का दशक	रॉबर्ट ओवन का सहकारिता आंदोलन; पहली यूनियनें
1797	नकद भुगतान निलंबित
1798	आयरिश विद्रोह; आयकर लागू
1799	गठबंधन विरोधी कानून
1801	ब्रिटिश तथा आयरिश संसदों का सम्मिलन; कैथोलिक राहत पराजित

1802	एप्रेंटिस नैतिकता अधिनियम
1806	पिट की मृत्यु
1806-12	'समस्त प्रतिभाओं' की सरकार
1807	दासता प्रथा का निषेध
1809	परसवेल प्रधान मंत्री; मेजर कार्टराइट द्वारा हैम्डेन क्लबों का गठन
1811	लडाइट विद्रोह
1812-27	लिवरपूल प्रधान मंत्री
1815	अन्न व्यापार कानून प्रस्तुत
1816	ब्लैंकटियर्स का मार्च
1819	पीटरलू का नरसंहार
1820	जॉर्ज तृतीय की मृत्यु; जॉर्ज चतुर्थ ने गद्दी संभाली; कैटो स्ट्रीट षड़यंत्र
1823	पील द्वारा दंड संहिता का सुधार प्रारंभ; हसकिसन द्वारा व्यापार परिषद् में सुधार प्रारंभ।
1824	गठबंधन विरोधी अधिनियम रद्द
1827	हसकिसन का खिसकता आधार; वेलिंगटन प्रधानमंत्री
1828	कारपोरेशन एवं टेस्ट अधिनियम समाप्त
1829	महानगर पुलिस बल गठित; कैथोलिक मुक्ति अधिनियम
1830	जॉर्ज चतुर्थ की मृत्यु; विलियम चतुर्थ ने गद्दी संभाली; कृषि क्षेत्र में अशांति; ग्रे ने विग सरकार बनाई।
1831	सुधार विधेयक के लिए संघर्ष
1832	पहला सुधार अधिनियम पारित
1833	फैक्ट्री अधिनियम; पूरे ब्रिटिश साम्राज्य में गुलामी की समाप्ति; शिक्षा अनुदान प्रस्तुत
1834	दरिद्र कानून संशोधन अधिनियम; टॉलपडल शहीद; मेलबोर्न प्रधानमंत्री; टेमवर्थ घोषणापत्र।
1835	नगर निगम अधिनियम· आयरिश दशमांश (Tithe) अधिनियम
1836	जन्म, विवाह तथा मृत्यु का पंजीकरण
1837	विलियम चतुर्थ की मृत्यु; विक्टोरिया ने गद्दी संभाली
1839	पहली चार्टरवादी याचिका; बेडचेम्बर संकट; अन्न व्यापार कानून विरोधी लीग गठित।
1840	पेनी पोस्ट का प्रारंभ
1841-46	पील की दूसरी सरकार
1842	दूसरी चार्टरवादी याचिका; पील ने सीमा शुल्क में और कमी की; आयकर फिर; खदान अधिनियम।
1844	बैंक चार्टर अधिनियम; कंपनी अधिनियम; फैक्ट्री अधिनियम
1845	मेनूट ग्रांट; आयरिश अकाल
1846	पील द्वारा अन्न व्यापार कानूनों में संशोधन; रसल प्रधानमंत्री
1847	फील्डेन का फैक्ट्री अधिनियम
1848	तीसरी चार्टरवादी याचिका; आयरलैंड में विद्रोह; चैडविक के अधीन केंद्रीय स्वास्थ्य परिषद्
1849	नेवीगेशन अधिनियम समाप्त
1850	पील की मृत्यु

1851	महान प्रदर्शनी
1852	डर्बी डिजरायली सरकार
1853	पामरस्टन की पहली सरकार
1860	राजकोष में ग्लैडस्टोन की मुक्त व्यापार नीति
1866	तीसरी डर्बी डिजरायली सरकार
1867	दूसरा सुधार अधिनियम पारित

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में, ब्रिटेन में राजनीतिक बदलाव बिना किसी हिंसा के संपन्न हो गया। शासक वंश पर संसदीय नियंत्रण बना। पढ़िए भाग 2.2।
2) देखिए भाग 2.3
3) देखिए भाग 2.3
4) ब्रिटेन के कानून निर्माता और प्रवर्तक समाज के उच्च स्तरों के लोग थे। सरकार भी इस वर्ग के प्रति पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण रखती थी। देखिए भाग 2.4।

बोध प्रश्न 2

1) देखिए भाग 2.5
2) देखिए भाग 2.7
3) देखिए भाग 2.7

बोध प्रश्न 3

1) देखिए भाग 2.8
2) देखिए उपभाग 2.8.4

बोध प्रश्न 4

1) सीमित मताधिकार, संसद में मजदूरों का प्रतिनिधित्व न होना, कम वेतन, बेरोजगारी आदि। पढ़िए भाग 2.9।
2) देखिए भाग 2.10।